# अध्याय – 1
# राजस्थान में जन जागरण एवं स्वतन्त्रता संग्राम
## I
## 1857 की क्रांति

### पृष्ठभूमि

राजस्थान के देशी राज्यों ने अंग्रेजी कम्पनी के साथ संधियाँ (1818 ई.) करके मराठों द्वारा उत्पन्न अराजकता से मुक्ति प्राप्त कर ली तथा राज्य की बाह्य सुरक्षा के बारे में भी निश्चित हो गए, क्योंकि अब कम्पनी ने उनके राज्य की बाहरी आक्रमणों से सुरक्षा की जिम्मेदारी भी ले ली थी। प्रत्यक्ष में देशी रियासतों पर कोई अधिक आर्थिक भार भी नहीं पड़ा, क्योंकि जो खिराज वे मराठों को चुकाते थे, वो ही खिराज अब अंग्रेजों को देना था। अतः राजा खुश हो गए कि अब उनका निरंकुश शासन चलता रहेगा। राजाओं को संधियों की शर्ते इतनी आकर्षक लगीं कि उन्होंने अंग्रेजी कम्पनी की ईमानदारी पर बिना शंका किए संधियों पर हस्ताक्षर कर दिए। परन्तु संधियों में उल्लेखित शर्तों को कम्पनी के अधिकारियों ने जैसे ही क्रियान्वित करना शुरू किया, राजाओं के वंश परम्परागत अधिकारों पर कुठाराघात होंने लगा। कम्पनी ने राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करके देशी नरेशों की प्रभुसत्ता पर भी चोट की एवं उनकी स्थिति कम्पनी के सामन्तों व जागीरदारों जैसी हो गई। कम्पनी की नीतियों से सामन्तों के पद, मर्यादा व अधिकारों को भी आघात लगा। कम्पनी द्वारा अपनाई गई आर्थिक नीतियों के परिणामस्वरूप राजा, सामन्त, किसान, व्यापारी, शिल्पी एवं मजदूर सभी वर्ग पीड़ित हुए। कम्पनी के साथ की गई संधियों के कई दुष्परिणाम सामने आए, जिन्होंने 1857 की क्रांति की पृष्ठभूमि बनाई।

### (1) राज्यों के आन्तरिक शासन में हस्तक्षेप

राजपूत राजाओं के साथ संधियाँ करते समय अंग्रेजों ने यह स्पष्ट आश्वासन दिया था कि वे राज्यों के आन्तरिक प्रशासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे। मगर अंग्रेजों ने राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप किया। जोधपुर के शासक पर दबाव डालकर 1839 ई. में जोधपुर के किले पर अधिकार कर लिया। 1842–43 ई. में अंग्रेजों ने पुनः जोधपुर के मामलों में हस्तक्षेप करते हुए नाथों की जागीरें जब्त कर उनको कैद में डाल दिया। 1819 ई. में उन्होंने जयपुर के मामलों में हस्तक्षेप किया। अंग्रेजों ने मांगरोल के युद्ध में (1821 ई.) कोटा महाराव के विरुद्ध दीवान जालिम सिंह की सहायता की, जो कि अंग्रेज समर्थक था। मेवाड़ के प्रशासन में भी पोलिटिकल एजेन्ट के बार–बार हस्तक्षेप ने राज्य की आर्थिक स्थिति को दयनीय बना दिया। 1823 ई. में कैप्टन कौब ने समस्त शासन प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया और महाराणा को खर्च के लिए एक हजार रु. दैनिक नियत कर दिया। इस प्रकार संधियों की शर्तों के विपरीत अंग्रेजों ने राज्यों के आन्तरिक प्रशासन में हस्तक्षेप कर उनकी बाह्य प्रभुसत्ता के साथ–साथ आन्तरिक स्वायत्तता भी खत्म कर दी। अब राजा अपने राज्य के सम्प्रभु स्वामी न रहकर अंग्रेजों की कृपादृष्टि पर निर्भर हो गए।

### (2) राज्यों के उत्तराधिकार मामलों में हस्तक्षेप

अंग्रेजों ने राज्यों से संधियाँ करते समय आश्वासन दिया था कि वह उनके परम्परागत शासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे। परन्तु राज्य में शांति व व्यवस्था बनाये रखने के बहाने अंग्रेजों ने उत्तराधिकार के मामलों में खुलकर हस्तक्षेप किया। 1826 ई. में अलवर राज्य के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप कर बलवंतसिंह व बनेसिंह के मध्य अलवर राज्य के दो हिस्से करवा दिए। भरतपुर के उत्तराधिकार के प्रश्न पर 1826 ई. में अंग्रेजों ने लोहागढ़ दुर्ग को घेर कर उसे नष्ट कर दिया एवं बालक राजा

बलवन्त सिंह को गद्दी पर बिठाकर, पोलिटिकल एजेन्ट के अधीन एक काउन्सिल की नियुक्ति कर दी, जो प्रशासन का संचालन करने लगी। अंग्रेजों ने अपने समर्थक उम्मीदवारों को उत्तराधिकारी बनाकर राज्यों में अप्रत्यक्ष रूप से अपनी राजनीतिक प्रभुता स्थापित की।

जिस राज्य का उत्तराधिकारी अल्पवयस्क होता, वहाँ ए.जी.जी., रेजीडेण्ट की अध्यक्षता में अपने समर्थकों की कौंसिल का गठन कर प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित कर लेते थे। 1835 ई. में जयपुर में शासन संचालन के लिए पोलिटिकल एजेन्ट के निर्देशन में सरदारों की समिति गठित की गई। 1844 ई. में बाँसवाड़ा में महारावल लक्ष्मणसिंह की नाबालिगी के दौरान प्रशासन पर अंग्रेजी नियंत्रण बना रहा। गोद लेने के प्रश्न पर भी अंग्रेज अपना निर्णय लादने का प्रयास करते थे।

## (3) राज्यों की कमजोर वित्तीय स्थिति

संधियों के द्वारा राजपूत राज्यों को मराठों एवं पिण्डारियों की लूटमार एवं बार–बार की आर्थिक माँगों से तो छुटकारा मिल गया, मगर अंग्रेजों ने भी प्रारम्भ से ही खिराज की प्रथा लागू कर आर्थिक शोषण की नीति अपना ली थी। यदि खिराज का भुगतान समय पर नहीं होता तो अंग्रेज कम्पनी उन पर चक्रवृद्धि ब्याज लगाकर खिराज वसूल करती थी। खिराज के अलावा कम्पनी शांति व्यवस्था स्थापित करने के नाम पर राज्यों से धन वसूल करती थी। युद्ध की परिस्थितियों में भी राजाओं को धन देने के लिए बाध्य किया जाता था। इसके अतिरिक्त राजाओं को अपने खर्च पर कम्पनी के लिए सेना रखनी पड़ती थी। यदि राजा उस सैनिक खर्च को वहन करने में असमर्थता दिखाता, तो उसके राज्य का कुछ भाग कम्पनी अपने अधीन कर लेती थी। अंग्रेजों ने जयपुर नरेश को शेखावाटी में राजमाता के समर्थक सामन्तों को कुचलने के लिए सैनिक सहायता दी व सैनिक खर्च के रूप में सांभर झील को अपने अधीन (1835 ई.) कर लिया। जोधपुर में शांति व्यवस्था स्थापित करने के नाम पर 1835 ई. में 'जोधपुर लीजियन' का गठन कर उसके खर्च के लिए एक लाख पन्द्रह हजार रुपये वार्षिक जोधपुर राज्य से वसूला जाने लगे। 1841 ई. में 'मेवाड़ भील कोर' की स्थापना मेवाड़ राज्य के खर्च पर की गई, 1822 ई. में 'मेरवाड़ा बटालियन', 1834 ई. में 'शेखावाटी ब्रिगेड' की स्थापना कर इसका खर्चा सम्बन्धित राज्यों से वसूला जाने लगा, जबकि इन सैनिक टुकड़ियों पर नियंत्रण एवं निर्देशन अंग्रेजों का था। इसी प्रकार 1825–30 के दौरान भीलों के विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजों ने सैनिक सहायता दी तथा सैनिक खर्च महाराणा के नाम पर ऋण के रूप में लिख दिया और फिर 6 प्रतिशत ब्याज लगाकर वह राशि वसूल की गई।

## (4) राज्यों का शिथिल प्रशासन

संधियों के बाद राजपूत राज्यों को बाह्य आक्रमणों का भय न रहा और आन्तरिक विद्रोह के समय भी अंग्रेजी सहायता उपलब्ध रही। प्रशासनिक मामलों में रेजीडेण्ट का दखल अधिकाधिक बढ़ने लगा। धीरे–धीरे राजाओं ने प्रशासन पर अपना नियंत्रण खो दिया, अब वे रेजीडेण्ट की इच्छानुसार शासन संचालन करने वाले रबर की मोहर मात्र रह गए। रेजीडेण्टों ने प्रशासन में अपने समर्थक व्यक्ति नियुक्त कर दिए। बाँसवाड़ा का शासन मुंशी शहामत अलीखाँ (1844–56 ई.) के हाथों में था, अलवर का प्रशासन अहमदबख्श खाँ (1815–26) के नियंत्रण में था तो जयपुर राज्य में 1835 ई. में अंग्रेज समर्थक जेठाराम सर्वेसर्वा बन गया। नरेशों का प्रशासन में महत्त्व नहीं होने से वे प्रशासन के प्रति पूर्णतः उदासीन हो गये। वे अपना समय रंग–रेलियों में, सुरा–सुन्दरी के भोग में गुजारने लगे। कई शासक यूरोपीय देशों की यात्राओं में समय व्यतीत करने लगे। उनके प्रासादों में रानियों के स्थान पर वेश्याएँ गौरव पाने लगी। प्रशासन की शिथिलता का दुष्परिणाम जन सामान्य को भुगतना पड़ा। सामन्त और राज्य कर्मचारी जनता को विभिन्न प्रकार से पीड़ित करने लगे, जिसकी परिणति कृषक आन्दोलनों के रूप में हुई।

## (5) किसानों एवं जनसाधारण के हितों पर कुठाराघात

अंग्रेजों के साथ संधियाँ करने के पश्चात् राजपूत

राज्यों के खर्च में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। अंग्रेजों ने राज्यों से अधिकाधिक खिराज लेने का प्रयास किया तथा अंग्रेज रेजीडेण्ट व सैनिक बटालियनों के ऊपर भी राजाओं को अधिक खर्च के लिए बाध्य किया गया। इसके साथ ही विकास कार्यों (रेलवे, सिंचाई, सड़क, शिक्षा, चिकित्सा) पर खर्च करने से भी राज्यों के खर्च में वृद्धि हुई, जबकि व्यापार पर अंग्रेजी आधिपत्य स्थापित हो जाने से राज्यों की आय में कमी आई। अतः राज्यों के सारे खर्च की पूर्ति का भार भूमि–कर पर ही आ पड़ा। इसलिए भूमि कर बढ़ाना आवश्यक हो गया। परन्तु अकाल पड़ने या किसी भी कारण से उपज कम होने पर भी किसानों को निर्धारित भूमिकर नकद राशि में देना ही पड़ता था, जिससे किसान साहूकारों के शिकंजे में और अधिक फंसते गए। अब किसानों को भूमि से बेदखल भी किया जाने लगा, जबकि अंग्रेजों के आगमन से पूर्व किसानों को भूमि से बेदखल नहीं किया जा सकता था। राज्यों ने अपने बढ़ते व्यय की पूर्ति के लिए किसानों पर चराई कर, सिंचाई कर आदि लगा दिए। शासकों ने प्रशासन पर से ध्यान हटाकर यात्राओं एवं मनोरंजन में समय व्यतीत करना शुरू कर दिया और खर्चों की पूर्ति के लिए किसानों पर भूमि कर के साथ अनेक प्रकार की अतिरिक्त कर भार लगा दिया जिससे किसानों की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई। रेलवे के विकास ने लोगों की समृद्धि के स्थान पर उन्हें निर्धन करने में ज्यादा योग दिया। ब्रिटेन निर्मित वस्तुओं से बाजार भर गए, राज्य का कच्चा माल रेलों द्वारा बाहर जाने लगा। यहाँ तक कि अकाल के दौरान भी खाद्यान्नों का निर्यात किया जाने लगा। व्यापार पर अंग्रेजी नियंत्रण स्थापित होने से राज्य के व्यापारी पलायन कर गए। दस्तकार व हस्तशिल्पियों द्वारा निर्मित वस्तुएँ ब्रिटेन की वस्तुओं से महंगी होने के कारण और अब उन्हें शासक वर्ग का संरक्षण न मिलने से उनका जीवन निर्वाह कठिन हो गया, जिससे उन्होंने अपना परम्परागत व्यवसाय छोड़ दिया और श्रमिक बन गए।

इस प्रकार राजपूत राज्यों को अंग्रेजों के साथ (1818 ई.) की गई संधियाँ आकर्षक लगी, मगर इनके परिणामस्वरूप शासक शक्तिहीन हो गए, सामन्तों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया तथा किसानों एवं जनसाधारण की दशा दयनीय हो गई। इन संधियों का ही दुष्परिणाम था कि 1857 की क्रांति के दौरान जनसाधारण एवं सामन्त वर्ग ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोहियों को सहायता दी व उनका स्वागत किया तथा बाद में भी राज्यों को किसान एवं जनसाधारण के आन्दोलनों का सामना करना पड़ा। राजा और प्रजा के मध्य जो सम्मानजनक सम्बन्ध थे, वे समाप्त होकर शोषक व शोषित में बदल गए।

## क्रांति का सूत्रपात एवं विस्तार

1857 की क्रांति प्रारम्भ होने के समय राजपूताना में नसीराबाद, नीमच, देवली, ब्यावर, एरिनपुरा एवं खेरवाड़ा में सैनिक छावनियाँ थी। इन 6 छावनियों में पाँच हजार सैनिक थे किन्तु सभी सैनिक भारतीय थे। मेरठ में हुए विद्रोह (10 मई,1857) की सूचना राजस्थान के ए.जी.जी. (एजेन्ट टू गवर्नर जनरल) जार्ज पैट्रिक लॉरेन्स को 19 मई, 1857 को प्राप्त हुई। सूचना मिलते ही उसने सभी शासकों को निर्देश दिये कि वे अपने–अपने राज्य में शान्ति बनाए रखें तथा अपने राज्यों में विद्रोहियों को न घुसने दें। यह भी हिदायत दी कि यदि विद्रोहियों ने प्रवेश कर लिया हो तो उन्हें तत्काल बंदी बना लिया जावे। ए.जी.जी. के सामने उस समय अजमेर की सुरक्षा की समस्या सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण थी, क्योंकि अजमेर शहर में भारी मात्रा में गोला बारूद एवं सरकारी खजाना था। यदि यह सब विद्रोहियों के हाथ में पड़ जाता तो उनकी स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ हो जाती। अजमेर स्थित भारतीय सैनिकों की दो कम्पनियाँ हाल ही में मेरठ से आयी थी और ए.जी.जी. ने सोचा कि सम्भव है यह इन्फेन्ट्री (15वीं बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री) मेरठ से विद्रोह की भावना लेकर आयी हो, अतः इस इन्फेन्ट्री को नसीराबाद भेज दिया तथा ब्यावर से दो मेर रेजीमेन्ट बुला ली गई। तत्पश्चात् उसने डीसा (गुजरात) से एक यूरोपीय सेना भेजने को लिखा।

राजस्थान में क्रांति की शुरुआत नसीराबाद से हुई, जिसके निम्न कारण थे –

(1) ए.जी.जी. ने 15वीं बंगाल इन्फेन्ट्री जो अजमेर में थी, उसे अविश्वास के कारण नसीराबाद में भेज दिया था। इस अविश्वास के चलते उनमें असंतोष पनपा।

(2) मेरठ में हुए विद्रोह की सूचना के पश्चात् अंग्रेज सैन्य अधिकारियों ने नसीराबाद स्थित सैनिक छावनी की रक्षार्थ फर्स्ट बम्बई लांसर्स के उन सैनिकों से, जो वफादार समझे जाते थे, गश्त लगवाना प्रारम्भ किया। तोपों को तैयार रखा गया। अतः नसीराबाद में जो 15वीं नेटिव इन्फेन्ट्री थी, उसके सैनिकों ने सोचा कि अंग्रेजों ने यह कार्यवाही भी भारतीय सैनिकों को कुचलने के लिए की है तथा गोला–बारूद से भरी तोपें उनके विरुद्ध प्रयोग करने के लिए तैयार की गई है। अतः उनमें विद्रोह की भावना जागृत हुई।

(3) बंगाल और दिल्ली से छद्मधारी साधुओं ने चर्बी वाले कारतूसों के विरुद्ध प्रचार कर विद्रोह का संदेश प्रसारित किया, जिससे अफवाहों का बाजार गर्म हो गया। वस्तुतः 1857 के विद्रोह का तात्कालिक कारण चर्बी वाले कारतूसों को लेकर था। एनफील्ड राइफलों में प्रयोग में लिए जाने वाले कारतूस की टोपी (केप) को दाँतों से हटाना पड़ता था। इन कारतूसों को चिकना करने के लिए गाय तथा सूअर की चर्बी काम में लाई जाती थी। इसका पता चलते ही हिन्दू–मुसलमान सभी सैनिकों में विद्रोह की भावना बलवती हो गई। सैनिकों ने यह समझा कि अंग्रेज उन्हें धर्म भ्रष्ट करना चाहते हैं। यही कारण था कि क्रांति का प्रारम्भ नियत तिथि से पहले हो गया।

राजस्थान में क्रांति का प्रारम्भ **28 मई, 1857 को नसीराबाद छावनी** के 15वीं बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री के सैनिकों द्वारा हुआ। नसीराबाद छावनी के सैनिकों में 28 मई, 1857 को विद्रोह कर छावनी को लूट लिया तथा अंग्रेज अधिकारियों के बंगलों पर आक्रमण किये। मेजर स्पोटिस वुड एवं न्यूबरी की हत्या के बाद शेष अंग्रेजों ने नसीराबाद छोड़ दिया। छावनी को लूटने के बाद विद्रोही सैनिकों ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। इन सैनिकों ने 18 जून, 1857 को दिल्ली पहुँचकर अंग्रेज पलटन को पराजित किया, जो दिल्ली का घेरा डाले हुए थी।

नसीराबाद की क्रांति की सूचना **नीमच** पहुँचने पर 3 जून, 1857 को नीमच छावनी के भारतीय सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। उन्होंने शस्त्रागार को आग लगा दी तथा अंग्रेज अधिकारियों के बंगलों पर हमला कर एक अंग्रेज सार्जेन्ट की पत्नी तथा बच्चों का वध कर दिया। नीमच छावनी के सैनिक चित्तौड़, हम्मीरगढ़ तथा बनेड़ा में अंग्रेज बंगलों को लूटते हुए शाहपुरा पहुँचे। यहाँ के सामन्त ने इनको रसद की आपूर्ति की। यहाँ से ये सैनिक निम्बाहेड़ा पहुँचे, जहाँ जनता ने इनका स्वागत किया। इन सैनिकों ने देवली छावनी को घेर लिया, छावनी के सैनिकों ने इनका साथ दिया। छावनी को लूटकर ये क्रांतिकारी टोंक पहुँचे, जहाँ जनता ने नवाब के आदेशों की परवाह न करते हुए इनका स्वागत किया। टोंक से आगरा होते हुये ये सैनिक दिल्ली पहुँच गये। कैप्टन शावर्स ने कोटा, बूँदी तथा मेवाड़ की सेनाओं की सहायता से नीमच पर पुनः अधिकार कर लिया।

1835 ई. में अंग्रेजों ने जोधपुर की सेना के सवारों पर अकुशल होने का आरोप लगाकर जोधपुर लीजियन का गठन किया। इसका केन्द्र **एरिनपुरा** रखा गया। 21 अगस्त, 1857 को जोधपुर लीजियन के सैनिकों ने विद्रोह कर आबू में अंग्रेज सैनिकों पर हमला कर दिया। यहाँ से ये एरिनपुरा आ गये, जहाँ इन्होंने छावनी को लूट लिया तथा जोधपुर लीजियन के शेष सैनिकों को अपनी ओर मिलाकर "चलो दिल्ली, मारो फिरंगी" के नारे लगाते हुए दिल्ली की ओर चल पड़े। एरिनपुरा के विद्रोही सैनिकों की भेंट 'खैरवा' नामक स्थान पर आउवा ठाकुर कुशालसिंह से हुई। कुशालसिंह, जो कि अंग्रेजों एवं जोधपुर महाराजा से नाराज था, इन सैनिकों का नेतृत्व करना स्वीकार कर लिया। ठाकुर कुशालसिंह के आह्वान पर आसोप, गूलर, व खेजड़ली के सामन्त अपनी सेना के साथ आउवा पहुँच गये। वहाँ मेवाड़ के सलूम्बर, रूपनगर तथा लसाणी के सामंतों ने अपनी सेनाएँ भेजकर सहायता प्रदान की। ठाकुर कुशालसिंह की सेना ने जोधपुर की राजकीय सेना को 8 सितम्बर, 1857 को बिथोड़ा नामक स्थान पर पराजित किया। जोधपुर की सेना की पराजय की खबर पाकर ए.जी.जी. जॉर्ज लारेन्स

स्वयं एक सेना लेकर आउवा पहुँचा। मगर 18 सितम्बर, 1857 को वह विद्रोहियों से परास्त हुआ। इस संघर्ष के दौरान जोधपुर का पोलिटिकल एजेन्ट मोक मेसन क्रांतिकारियों के हाथों मारा गया। उसका सिर आउवा के किले के द्वार पर लटका दिया गया। अक्टूबर, 1857 में जोधपुर लीजिय़न के क्रांतिकारी सैनिक दिल्ली की ओर कूच कर गये। ब्रिगेडियर होम्स के अधीन एक सेना ने 29 जनवरी, 1858 को आउवा पर आक्रमण कर दिया। विजय की उम्मीद न रहने पर कुशालसिंह ने किला सलूंबर में शरण ली। उसके बाद ठाकुर पृथ्वीसिंह ने विद्रोहियों का नेतृत्व किया। अन्त में, आउवा के किलेदार को रिश्वत देकर अंग्रेजों ने अपनी ओर मिला लिया और किले पर अधिकार कर लिया। अंग्रेजों ने यहाँ अमानवीय अत्याचार किए एवं आउवा की महाकाली की मूर्ति (सुगाली माता) को अजमेर ले गये।

**कोटा** में राजकीय सेना तथा आम जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया। 14 अक्टूबर, 1857 को कोटा के पोलिटिकल एजेन्ट मेजर बर्टन ने कोटा महाराव **रामसिंह द्वितीय** से भेंट कर अंग्रेज विरोधी अधिकारियों को दण्डित करने का सुझाव दिया। मगर महाराव ने अधिकारियों के अपने नियंत्रण में न होने की बात कहते हुए बर्टन के सुझाव को मानने से इन्कार कर दिया। 15 अक्टूबर, 1857 को कोटा की सेना ने रेजीडेन्सी को घेरकर मेजर बर्टन और उसके पुत्रों तथा एक डॉक्टर की हत्या कर दी। मेजर बर्टन का सिर कोटा शहर में घुमाया गया तथा महाराव का महल घेर लिया। विद्रोही सेना का नेतृत्व रिसालदार मेहराबखाँ और लाला जयदयाल कर रहे थे। विद्रोही सेना को कोटा के अधिकांश अधिकारियों व किलेदारों का भी सहयोग व समर्थन प्राप्त हो गया। विद्रोहियों ने राज्य के भण्डारों, राजकीय बंगलों, दुकानों, शस्त्रागारों, कोषागार एवं कोतवाली पर अधिकार कर लिया। कोटा महाराव की स्थिति असहाय हो गयी। वह एक प्रकार से महल का कैदी हो गया। लाला जयदयाल और मेहराबखाँ ने समस्त प्रशासन अपने हाथ में ले लिया और जिला अधिकारियों को राजस्व वसूली के आदेश दिये गये। मेहराबखाँ और जयदयाल ने महाराव को एक परवाने पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया, जिसमें मेजर बर्टन व उसके पुत्रों की हत्या महाराव के आदेश से करने एवं लाला जयदयाल को मुख्य प्रशासनिक अधिकारी नियुक्त करने की बातों का उल्लेख था। लगभग छः महीने तक विद्रोहियों का प्रशासन पर नियंत्रण रहा। कोटा के जनसामान्य में भी अंग्रेजों के विरुद्ध तीव्र आक्रोश था। उन्होंने विद्रोहियों को अपना समर्थन व सहयोग दिया। जनवरी, 1858 में करौली से सैनिक सहायता मिलने पर महाराव के सैनिकों ने क्रांतिकारियों को गढ़ से खदेड़ दिया। किन्तु कोटा शहर को क्रांतिकारियों से मुक्त कराना अभी शेष था। 22 मार्च, 1858 को जनरल राबर्ट्स के नेतृत्व में एक सेना ने कोटा शहर को विद्रोहियों से मुक्त करवाया।

**टोंक** का नवाब वजीरुद्दौला अंग्रेज समर्थक था। लेकिन टोंक की जनता एवं सेना की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ थी। सेना का एक बड़ा भाग विद्रोहियों से मिल गया तथा इन सैनिकों ने नीमच के सैनिकों के साथ नवाब के किले को घेर लिया। सैनिकों ने नवाब से अपना वेतन वसूल किया और नीमच की सेना के साथ दिल्ली चले गए। नवाब के मामा मीर आलम खाँ ने विद्रोहियों का साथ दिया। 1858 ई. के प्रारम्भ में तांत्या टोपे के टोंक पहुँचने पर जनता ने तांत्या को सहयोग दिया एवं टोंक का जागीरदार नासिर मुहम्मद खाँ ने भी तांत्या का साथ दिया, जबकि नवाब ने अपने–आपको किले में बन्द कर लिया।

**धौलपुर** महाराजा भगवन्त सिंह अंग्रेजों का पक्षधर था। अक्टूबर, 1857 में ग्वालियर तथा इंदौर के क्रांतिकारी सैनिकों ने धौलपुर में प्रवेश किया। धौलपुर राज्य की सेना तथा अधिकारी क्रांतिकारियों से मिल गये। विद्रोहियों ने दो महीने तक राज्य पर अपना अधिकार बनाये रखा। दिसम्बर, 1857 में पटियाला की सेना ने धौलपुर से क्रांतिकारियों को भगा दिया।

1857 में **भरतपुर** पर पोलिटिकल एजेन्ट का शासन था। अतः भरतपुर की सेना विद्रोहियों को दबाने के लिए भेजी गयी। परन्तु भरतपुर की मेव व गुर्जर जनता ने क्रांतिकारियों का साथ दिया। फलस्वरूप अंग्रेज अधिकारियों

ने भरतपुर छोड़ दिया। मगर भरतपुर से विद्रोहियों के चले जाने पर वहाँ तनाव का वातावरण बना रहा।

**करौली** के शासक महाराव मदनपाल ने अंग्रेज अधिकारियों का साथ दिया। महाराव ने अपनी सेना अंग्रेजों को सौंप दी तथा कोटा महाराव की सहायता के लिए भी अपनी सेना भेजी। उसने अपनी जनता से विद्रोह में भाग न लेने व विद्रोहियों का साथ न देने की अपील की।

**अलवर** भी क्रांतिकारी भावनाओं से अछूता नहीं था। अलवर के दीवान फैजुल्ला खाँ की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ थी। महाराजा बन्नेसिंह ने अंग्रेजों की सहायतार्थ आगरा सेना भेजी। अलवर राज्य की गुर्जर जनता की सहानुभूति भी क्रांतिकारियों के साथ थी।

**बीकानेर** महाराज सरदारसिंह राजस्थान का अकेला ऐसा शासक था जो सेना लेकर विद्रोहियों को दबाने के लिए राज्य से बाहर भी गया। महाराजा ने पंजाब में विद्रोह को दबाने में अंग्रेजों का सहयोग किया। महाराजा ने अंग्रेजों को शरण तथा सुरक्षा भी प्रदान की। अंग्रेज विरोधी भावनाओं पर महाराजा ने कड़ा रूख अपनाकर उन पर नियंत्रण रखा।

**मेवाड़** महाराणा स्वरूपसिंह ने अपनी सेना विद्रोहियों को दबाने के लिए अंग्रेजों की सहायतार्थ भेजी। उधर महाराणा के सम्बन्ध न तो अपने सरदारों से अच्छे थे और न कम्पनी सरकार से। महाराणा अपने सामंतों को प्रभावहीन करना चाहता था। इस समय महाराणा और कम्पनी सरकार दोनों को ही एक–दूसरे की आवश्यकता थी। मेरठ विद्रोह की सूचना आने पर मेवाड़ में भी विद्रोही गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए आवश्यक कदम उठाये गये। नीमच के क्रांतिकारी नीमच छावनी में आग लगाने के बाद मार्ग के सैनिक खजानों को लूटते हुए शाहपुरा पहुँचे। शाहपुरा मेवाड़ का ही ठिकाना था। शाहपुरा के शासक ने क्रांतिकारियों को सहयोग प्रदान किया। मेवाड़ की सेना क्रांतिकारियों का पीछा करते हुए शाहपुरा पहुँची तथा स्वयं कप्तान भी शाहपुरा आ गया परन्तु शाहपुरा के शासक ने किले के दरवाजे नहीं खोले। महाराणा ने अनेक अंग्रेजों को शरण तथा सुरक्षा भी प्रदान की। यद्यपि राज्य की जनता में अंग्रेजों के विरुद्ध रोष विद्यमान था। जनता ने विद्रोह के दौरान रेजीडेण्ट को गालियाँ निकालकर अपने गुस्से का इजहार किया। मेवाड़ के सलूम्बर व कोठारिया के सामन्तों ने क्रांतिकारियों का सहयोग दिया। इन सामन्तों ने ठाकुर कुशालसिंह व तांत्या टोपे की सहायता की।

**बाँसवाड़ा** का शासक महारावल लक्ष्मण सिंह भी विद्रोह के दौरान अंग्रेजों का सहयोगी बना रहा। 11 दिसम्बर, 1857 को तांत्या टोपे ने बाँसवाड़ा पर अधिकार कर लिया। महारावल राजधानी छोड़कर भाग गया। राज्य के सरदारों ने विद्रोहियों का साथ दिया।

डूँगरपुर, जैसलमेर, सिरोही और बूँदी के शासकों ने भी विद्रोह के दौरान अंग्रेजों की सहायता की।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि राजपूताने में नसीराबाद, आउवा, कोटा, एरिनपुरा तथा देवली सैनिक विद्रोह एवं क्रांति के प्रमुख केन्द्र थे। इनमें भी कोटा सर्वाधिक प्रभावित स्थान रहा। कोटा की क्रांति की यह भी उल्लेखनीय बात रही कि इसमें राज्याधिकारी भी क्रांतिकारियों के साथ थे तथा उन्हें जनता का प्रबल समर्थन था। वे चाहते थे कोटा का महाराव अंग्रेजों के विरुद्ध हो जाये तो वे महाराव का नेतृत्व स्वीकार कर लेंगे किन्तु महाराव इस बात पर सहमत नहीं हुए। आउवा का ठाकुर कुशालसिंह को मारवाड़ के साथ मेवाड़ के कुछ सामंतों एवं जनसाधारण का समर्थन एवं सहयोग प्राप्त होना असाधारण बात थी। एरिनपुरा छावनी के पूर्बिया सैनिकों ने भी उसके अंग्रेज विरोधी संघर्ष में साथ दिया था। जोधपुर लीजियन के क्रांतिकारी सैनिकों ने आउवा के ठाकुर के नेतृत्व में लेफ्टिनेंट हेथकोट को हराया था। आउवा के विद्रोह को ब्रिटिश सर्वोच्चता के विरुद्ध जन संग्राम के रूप में देखने पर किसी को कोई आपत्ति नहीं होना चाहिये। जयपुर, भरतपुर, टोंक में जनसाधारण ने अपने शासकों की नीति के विरुद्ध विद्रोहियों का साथ दिया। धौलपुर में क्रांतिकारियों ने राज्य प्रशासन अपने हाथों में ले लिया था।

1857 के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान राजस्थान की जनता एवं जागीरदारों ने विद्रोहियों को सहयोग एवं समर्थन दिया। तांत्या टोपे को भी राजस्थान की जनता एवं कई सामन्तों ने सहायता प्रदान की। कोटा, टोंक, बाँसवाड़ा और भरतपुर राज्यों पर कुछ समय तक विद्रोहियों का अधिकार रहा, जिसे जन समर्थन प्राप्त था। राजस्थान की जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा का खुला प्रदर्शन किया। उदयपुर में कप्तान शावर्स को बुरा–भला कहा गया, जबकि जोधपुर में कप्तान सदरलैण्ड के स्मारक पर पत्थर बरसाये। फिर भी विद्रोहियों में किसी सर्वमान्य नेतृत्व का न होना, आपसी समन्वय एवं रणनीति की कमी, शासकों का असहयोग तथा साधनों एवं शस्त्रों की कमी के कारण यह क्रांति असफल रही।

## क्रांति का समापन

क्रांति का अन्त सर्वप्रथम दिल्ली में हुआ, जहाँ 21 सितम्बर, 1857 को मुगल बादशाह को परिवार सहित बन्दी बना लिया। जून, 1858 तक अंग्रेजों ने अधिकांश स्थानों पर पुनः अपना नियन्त्रण स्थापित कर लिया। किंतु तांत्या टोपे ने संघर्ष जारी रखा। अंग्रेजों ने उसे पकड़ने में सारी शक्ति लगा दी। यह स्मरण रहे कि तांत्या टोपे ने राजस्थान के सामन्तों तथा जन साधारण में उत्तेजना का संचार किया था। परन्तु राजपूताना के सहयोग के अभाव में तांत्या टोपे को स्थान–स्थान पर भटकना पड़ा। अंत में, उसे पकड़ लिया गया और फांसी पर चढ़ा दिया।

क्रांति के दमन के पश्चात् कोटा के प्रमुख नेता जयदयाल तथा मेहराब खाँ को एजेन्सी के निकट नीम के पेड़ पर सरे आम फांसी दे दी गई। क्रांति से सम्बन्धित अन्य नेताओं को भी मौत के घाट उतार दिया अथवा जेल में डाल दिया। अंग्रेजों द्वारा गठित जांच आयोग ने मेजर बर्टन तथा उसके पुत्रों की हत्या के सम्बन्ध में महाराव रामसिंह द्वितीय को निरपराध किंतु उत्तरदायी घोषित किया। इसके दण्डस्वरूप उसकी तोपों की सलामी 15 तोपों से घटाकर 11 तोपें कर दी गई। जहाँ तक आउवा ठाकुर का प्रश्न है, उसने नीमच में अंग्रेजों के सामने आत्मसमर्पण (8 अगस्त, 1860) कर दिया था। उस पर मुकदमा चलाया गया, किंतु बरी कर दिया गया।

## परिणाम

यद्यपि 1857 की क्रांति असफल रही किंतु उसके परिणाम व्यापक सिद्ध हुए। क्रांति के पश्चात् यहाँ के नरेशों को ब्रिटिश सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया क्योंकि राजपूताना के शासक उनके लिए उपयोगी साबित हुए थे। अब ब्रिटिश नीति में परिवर्तन किया गया। शासकों को संतुष्ट करने हेतु 'गोद निषेध' का सिद्धान्त समाप्त कर दिया गया। राजकुमारों के लिए अंग्रेजी शिक्षा का प्रबन्ध किया जाने लगा। अब राज्य कम्पनी शासन के स्थान पर ब्रिटिश नियंत्रण में सीधे आ गये। साम्राज्ञी विक्टोरिया की ओर से की गई घोषणा (1858) द्वारा देशी राज्यों को यह आश्वासन दिया गया कि देशी राज्यों का अस्तित्व बना रहेगा। क्रांति के पश्चात् नरेशों एवं उच्चाधिकारियों की जीवन शैली में पाश्चात्य प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता हैं। अब राजस्थान के राजे–महाराजे अंग्रेजी साम्राज्य की व्यवस्था में सेवारत होकर आदर प्राप्त करने व उनकी प्रशंसा करने के आदी हो गए थे। जहाँ तक सामन्तों का प्रश्न है, उसने खुले रूप में ब्रिटिश सत्ता का विरोध किया था। अतः क्रांति के पश्चात् अंग्रेजों की नीति सामन्त वर्ग को अस्तित्वहीन बनाने की रही। जागीर क्षेत्र की जनता की दृष्टि में सामन्तों की प्रतिष्ठा कम करने का प्रयास किया गया। सामन्तों को बाध्य किया गया कि से सैनिकों को नगद वेतन देवें। सामन्तों के न्यायिक अधिकारों को सीमित करने का प्रयास किया। उनके विशेषाधिकारों पर कुठाराघात किया गया। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि सामन्तों का सामान्य जनता पर जो प्रभाव था, ब्रिटिश नीतियों के कारण कम करने का प्रयास किया गया।

क्रान्ति के बाद अंग्रेजी सरकार ने रेल्वे व सड़कों का जाल बिछाने का काम शुरू किया, जिससे आवागमन की व्यवस्था तेज व सुचारू हो सके। मध्यम वर्ग के लिए शिक्षा

का प्रसार कर एक शिक्षित वर्ग खड़ा किया गया, जो उनके लिए उपयोगी हो सके। अर्थतन्त्र की मजबूती के लिए वैश्य समुदाय को संरक्षण देने की नीति अपनाई। बाद में वैश्य समुदाय राजस्थान में और अधिक प्रभावी बन गया।

1857 की क्रांति ने अंग्रेजों की इस धारणा को निराधार सिद्ध कर दिया कि मुगलों एवं मराठों की लूट से त्रस्त राजस्थान की जनता ब्रिटिश शासन की समर्थक है। परन्तु यह भी सच है कि भारत विदेशी जुये को उखाड़ फेंकने के प्रथम बड़े प्रयास में असफल रहा। राजस्थान में फैली क्रांति की ज्वाला ने अर्द्ध शताब्दी के पश्चात् भी स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान लोगों को संघर्ष करने की प्रेरणा दी, यही क्रांति का महत्त्व समझना चाहिए।

## क्रांति का स्वरूप (1857)

1857 की घटना को लम्बे समय तक सैनिक विद्रोह या विप्लव के नाम से सम्बोधित किया जाता रहा। परन्तु आधुनिक विद्वानों, इतिहासकारों एवं शिक्षाविदों के विचार –विमर्श के बाद यह माना गया कि क्रान्ति का स्वरूप केवल सैनिक विद्रोह ही नहीं था बल्कि यह राष्ट्रीय जन क्रान्ति थी। फिर भी किसी घटना पर मत विभेद होना अनुचित नहीं है।

निःसन्देह 1857 का वर्ष राजस्थान सहित भारत के लिए यादगार वर्ष रहा, क्योंकि ऐसी महान घटना भारतीय इतिहास की पहली घटना थी। भावी स्वतन्त्रता संग्राम ने देशभक्तों और विशेष रूप से क्रांतिकारियों पर असाधारण प्रभाव ड़ाला। यह घटना उनके लिए प्रेरणा का स्त्रोत बनी। सम्पूर्ण राष्ट्र द्वारा 1857 की 150 वीं जयन्ती वर्ष 2007 में उत्साहपूर्वक मनाना ही घटना के महत्व एवं प्रभाव को दर्शाती है। वास्तविक अर्थो में विद्रोह के स्वरूप के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि किसी क्रांति का स्वरूप केवल उस क्रांति के प्रारम्भ करने वालों के लक्ष्यों से निर्धारित नहीं हो सकता, बल्कि इससे निर्धारित होता है कि उस क्रांति ने अपनी क्या छाप छोड़ी।

1857 की घटना के स्वरूप को लेकर विद्वानों में अनेक मत हैं। ब्रिटिश इतिहासकारों ने इसे सैनिक विद्रोह कहा है जबकि गैर ब्रिटिश विद्वानों ने इस घटना को जन आक्रोश की संज्ञा दी है। भारतीय इतिहासकारों में प्रमुख रूप से आर.सी. मजूमदार, सुरेन्द्र नाथ सेन एंव अशोक मेहता आदि ने 1857 की महान घटना को जन साधारण का राष्ट्रीय आन्दोलन कहा है, जिसमें हिन्दू–मुस्लिम सबने मिलकर ब्रिटिश शासन का विरोध किया।

यहाँ हमारे लिए यह उचित होगा कि हम राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में इस घटना की समीक्षा करें। मारवाड़ के ख्यात लेखक बांकीदास, बूँदी के साहित्यकार सूर्यमल्ल मीसण ने अपनी कृतियों अथवा पत्रों के माध्यम से गुलामी करने वाले राजपूत शासकों को धिक्कारा है। सूर्यमल्ल मीसण ने पीपल्या के ठाकुर फूलसिंह को लिखे एक पत्र में राजपूत शासकों को गुलामी करने की मनोवृत्ति की कटु आलोचना की थी। आउवा व अन्य कुछ ठाकुरों ने, जिनमें सलूम्बर भी शामिल है, अपने क्षेत्रों में चारणों द्वारा ऐसे गीत रचवाये, जिनमें उनकी छवि अंग्रेज विरोधी मालूम होती है।

राजस्थान में क्रांति की शुरुआत 1857 से हुई, जब यहाँ के ब्रिटिश अधिकारी भागकर ब्यावर की ओर गये, तब रास्ते में ग्रामीण उन पर आक्रमण करने के लिए खड़े थे। कप्तान प्रिचार्ड ने स्वीकार किया है कि यदि बम्बई लॉन्सर के सैनिक उनके साथ न होते तो उनका बचे रहना आसान नहीं था। उसके अनुसार मार्ग में किसी भी भारतीय ने उनके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित नहीं की। उसने आगे लिखा है कि इस घटना के 24 घण्टे पहले ऐसी स्थिति नहीं थी। इन अंग्रेजों के घरेलू नौकरों में उनके प्रति उपेक्षा का भाव देखा गया। क्रांतिकारी जिस मार्ग से भी गुजरे, लोगों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। मध्य भारत का लोकप्रिय नेता तॉत्या टोपे जहाँ भी गया, जनता ने उसका अभिनन्दन किया तथा उसे रसद आदि प्रदान की। जोधपुर के सरकारी रिकार्ड में यह स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि जब ए.जी.जी. जॉर्ज लॉरेन्स ने आउवा पर चढ़ाई की तब सर्वप्रथम गाँव वालों की तरफ से आक्रमण हुआ था। मारवाड़ में ऐसी परम्परा थी कि जब किसी बड़े अधिकारी की मृत्यु होती थी

तब राजकीय शोक मनाते हुए किले में नौबत बजाना बन्द हो जाता था। किंतु कप्तान मॉक मेसन की मृत्यु के बाद ऐसा नहीं किया गया, जबकि किलेदार अनाड़सिंह की मृत्यु होने पर किले में नौबत बजाना बन्द रख गया। आउवा ठाकुर कुशालसिंह द्वारा ब्रिटिश सेनाओं की टक्कर लेने से घटना को उस समय के साहित्य में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया है।

राजस्थान के संदर्भ में 1857 की क्रांति का अध्ययन और विश्लेषण करने से यह विदित होता है कि राजस्थान में यह महान् घटना किसी संयोग का परिणाम नहीं थी, अपितु यह तो ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध सर्वव्यापी रोष का परिणाम थी। यही कारण है कि आउवा की जनता सैनिकों के जाने के बाद भी लड़ती रही। नसीराबाद, नीमच और एरिनपुरा की घटनाएँ निःसन्देह भारतव्यापी क्रांति का अंग थी, लेकिन कोटा और आउवा की घटनाएँ स्थानीय परिस्थितियों का परिणाम थी और उनमें ब्रिटिश विरोधी भावना निर्विवाद रूप से विद्यमान थी। टोंक और कोटा की जनता ने तो विद्रोहियों से मिलकर संघर्ष में भाग लिया था।

जन आक्रोश के कारण ही भरतपुर के शासक ने मोरीसन को राज्य छोड़ने का परामर्श दिया था। कोटा के महाराव ने भी मेजर बर्टन को कोटा नहीं आने के लिए कहा था। जन आक्रोश के कारण ही मजबूरीवश टोंक के नवाब ने अंग्रेजों को अपने राज्य की सीमा से नहीं गुजरने के लिए कहा था।

अंत में, यह कहा जा सकता है कि राजस्थान की जनता अंग्रेजों को फिरंगी कहती थी और अपने धर्म को बनाये रखने के लिए उनसे मुक्ति चाहती थी। कुछ स्थानों पर स्थानीय जनता ने भी इस संघर्ष में भाग लिया था, तो अन्य स्थानों पर जनता का नैतिक समर्थन प्राप्त था। यह कहने में हमें संकोच नहीं करना चाहिए कि 1857 का यह संघर्ष विदेशी शासन से मुक्त होने का प्रथम प्रयास था। इस क्रांति को यदि राजस्थान का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम कहा जाये तो सम्भवतः अनुचित नहीं होगा।

# II

# राजनीतिक जागरण एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन में विभिन्न तत्त्वों का योगदान

1857 की क्रांति की भूमिका यद्यपि राजस्थान में कुछ स्थानों पर अत्यधिक प्रभावी रही थी किंतु अधिकांश राज्य इससे अछूते रहे। 1857 की क्रांति की असफलता के कारण देश के अनुरूप राजस्थान में भी अंग्रेजों का वर्चस्व स्थापित हो गया। राजस्थान के अधिकांश शासक अंग्रेजों के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति प्रदर्शन की दौड़ में शामिल हो गये। ऐसा करके वे स्वयं को गौरवान्वित समझने लगे। ऐसी परिस्थितियों में राज्य की प्रजा में भी अंग्रेजों की अजेयता की भावना का घर करना अस्वाभाविक नहीं था। राजकीय कार्यों एवं जन कल्याण की भावना के प्रति शासकों की उदासीनता ने प्रजा के कष्टों को असहनीय बना दिया। सामन्तों की शोषण प्रवृत्ति यथावत बनी। परन्तु सदैव एक जैसी स्थिति बनी नहीं रह सकती है। स्थिति में बदलाव के संकेत बाहर से नहीं, अन्दर से ही आने थे। राज्य की जनता ही बदलाव की संवाहक बनी। देरी से ही सही, राजस्थान में राजनीतिक चेतना का विकास हुआ। राष्ट्र के सोच में परिवर्तन के साथ देशी रियासतों में भी राष्ट्रवादी भावनाओं ने जन्म लिया। जन आन्दोलनों ने भी स्थानीय स्तर पर अपनी जगह बनाकर माहौल को उत्तेजित कर दिया। राज्य की दमनात्मक नीतियों एवं ब्रिटिश सरकार के कठोर दृष्टिकोण के बावजूद जनता ने अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ी। शासन में सुधार एवं भागीदारी के लिए आवाज उठाई। आजादी की अन्तिम लड़ाई के दौरान राष्ट्र के बड़े नेताओं को इस बात का अहसास हो गया था कि अब देशी रियासतों को पराधीन बनाकर अधिक समय तक नहीं रखा जा सकता। आखिर, राष्ट्र की स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् राजस्थान की देशी रियासतों का भी भारतीय संघ में विलीनीकरण हो गया।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि राजस्थान में स्वतन्त्रता से पूर्व जनजागरण लाने का कार्य जिन नेताओं ने किया, उनमें देशभक्ति का जलवा था। वे समकालीन समाज एवं राजनीति को लेकर चिन्तित एवं व्यथित थे। वे

क्रांतिकारी विचारों से युक्त थे। उनके नजरिये में स्वतन्त्रता आन्दोलन से तात्पर्य केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने से नहीं था। वे सामाजिक समस्याओं एवं कुरीतियों के निराकरण, स्त्रियों की दुर्दशा सुधारने तथा कृषकों का शोषण, निरक्षरता, बेगारी आदि के उन्मूलन के लिए भी कृत संकल्प थे। वे चरखा, खादी, ग्राम–स्वावलम्बन, सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के पक्ष में थे। देशी रियासतों में 1934 और विशेष रूप से 1938 के बाद चला संघर्ष भी इसी स्वतन्त्रता संघर्ष का हिस्सा था।

राजनीतिक जागरण एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन में जिन मुख्य तत्त्वों का योगदान रहा, उनका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है –

## जनजातीय एवं किसान आन्दोलन

राजस्थान में राजनीतिक चेतना का श्रीगणेश कर यहाँ की जनजातियों एवं किसानों ने इतिहास रच दिया। राजस्थान के आदिवासी क्षेत्रों में भील, मीणा, गरासिया आदि जनजातियाँ प्राचीन काल से रहती आयी हैं। अपने परम्परागत अधिकारों के उल्लंघन की स्थिति में इन्होंने अपना विरोध प्रकट किया, चाहे वह फिर अंग्रेजों के विरुद्ध हो या फिर देशी शासक के विरुद्ध । यहाँ के किसानों ने भी अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों, शोषण एवं आर्थिक मार के विरोध में अपना विरोध जताकर राजनीतिक व्यवस्था को चुनौती दे डाली। अंग्रेजों का आतंक, रियासतों की अव्यवस्था, जागीरदारों का शोषण, कृषकों के परम्परागत अधिकारों का उल्लंघन आदि कारणों से कृषकों में असंतोष पनपा। जागीरी क्षेत्र में कृषकों का असंतोष जागीरदारों के जुल्मों के विरुद्ध था। जागीरदारों को कृषकों के हितों की कोई चिन्ता नहीं थी। जागीरदार अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र रहने के कारण उसे शासकों अथवा अंग्रेज सरकार से संरक्षण प्राप्त था।

राजस्थान में स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं आदिवासियों में जनजागृति का शंखनाद फूंकने का योगदान देने वालों में मोतीलाल तेजावत (1888–1963) का विशिष्ट स्थान है। तेजावत का जन्म उदयपुर जिले में एक सामान्य ओसवाल परिवार में हुआ था। तेजावत अपने बलबूते पर एक बड़ा आन्दोलन "एकी आन्दोलन" (1921–22) खड़ा करने में सफल रहा। उन्होंने जिस प्रकार आदिवासियों का विश्वास प्राप्त किया, वह एकदम अकल्पनीय लगता है। तेजावत से पहले गोविन्द गुरू (1858–1931) ने वॉगड़ प्रदेश में आदिवासी भीलों के उद्धार के लिए 'भगत आन्दोलन' (1921–1929) चलाया था। इससे पूर्व गोविन्द गुरु ने 1905 में 'सम्प सभा' की स्थापना कर इसके माध्यम से भीलों में सामाजिक एवं राजनीतिक जागृति पैदा कर उन्हें संगठित किया।

गोविन्द गुरु ने मेवाड़, डूँगरपुर, ईडर, मालवा आदि क्षेत्रों में बसे भीलों एवं गरासियों को 'सम्प सभा' के माध्यम से संगठित किया। उन्होंने एक ओर तो इन आदिवासी जातियों में व्याप्त सामाजिक बुराइयों और कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया तो दूसरी ओर, उनको अपने मूलभूत अधिकारों का अहसास कराया। गोविन्द गुरु ने 'सम्प सभा' का प्रथम अधिवेशन गुजरात में स्थित मानगढ़ की पहाड़ी पर किया। इस अधिवेशन में गोविन्द गुरु के प्रवचनों से प्रभावित होकर हजारों भील–गरासियों ने शराब छोड़ने, बच्चों को पढ़ाने और आपसी झगड़ों को अपनी पंचायत में ही सुलझाने की शपथ ली। गोविन्द गुरु ने उन्हें बैठ–बेगार और गैर वाजिब लागतें नहीं देने के लिए आह्वान किया। इस अधिवेशन के पश्चात् हर वर्ष आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को मानगढ़ की पहाड़ी पर सम्प सभा का अधिवेशन होने लगा। भीलों में बढ़ती जागृति से पड़ोसी राज्य सावधान हो गये। अतः उन्होंने ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना की कि भीलों के इस संगठन को सख्ती से दबा दिया जावे। हर वर्ष की भाँति जब 1913 में मानगढ़ की पहाड़ी पर सम्प सभा का विराट् अधिवेशन हो रहा था, तब ब्रिटिश सेना ने मानगढ़ की पहाड़ी को चारों ओर से घेर लिया। उसने भीड़ पर गोलियों की बौछार कर दी। फलस्वरूप 1500 आदिवासी घटना स्थल पर ही शहीद हो गये। गोविन्द गुरु को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें फांसी की सजा सुनाई गई। परन्तु भीलों में प्रतिक्रिया होने के डर से उनकी यह सजा 20 वर्षों के

कारावास में तब्दील कर दी। अंत में वे 10 वर्ष में ही रिहा हो गये। गोविन्द गुरु अहिंसा के पक्षधर थे व उनकी श्वेत ध्वजा शांति की प्रतीक थी। आज भी भील समाज में गोविन्द गुरु का पूजनीय स्थान है।

राजस्थान के आदिवासियों में गोविन्द गुरु के पश्चात् सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है, मोतीलाल तेजावत का। आदिवासियों पर ढाये जाने वाले जुल्मों से उद्वेलित होकर उन्होंने ठिकाने की नौकरी छोड़ दी। उन्होंने 1921 में भीलों को जागीरदारों द्वारा ली जाने वाली बैठ–बेगार और लाग–बागों के प्रश्न को लेकर संगठित करना प्रारम्भ किया। शनैः शनैः यह आन्दोलन सिरोही, ईडर, पालनपुर, विजयनगर आदि राज्यों में भी विस्तार पाने लगा। तेजावत ने अपनी मांगों को लेकर भीलों का एक विराट् सम्मेलन विजयनगर राज्य के नीमड़ा गाँव में आयोजित किया। मेवाड़ एवं अन्य पड़ोसी राज्यों की सरकारें भीलों के संगठित होने से चिंतित होने लगी। अतः इन राज्यों की सेनाएँ भीलों के आन्दोलन को दबाने के लिए नीमड़ा पहुँच गयी। सेना द्वारा सम्मेलन स्थल को घेर लेने और गोलियाँ चलाने के कारण 1200 भील मारे गये और कई घायल हो गये। मोतीलाल तेजावत पैर में गोली लगने से घायल हो गये। लोग उन्हें सुरक्षित स्थान ले गये, जहाँ उनका इलाज किया गया। मोतीलाल तेजावत भूमिगत हो गये, इस कारण मेवाड़, सिरोही आदि राज्यों की पुलिस उनको पकड़ने में नाकामयाब रहीं। अंत में, 8 वर्ष पश्चात् 1929 में गाँधीजी की सलाह पर तेजावत ने अपने आपको ईडर पुलिस के सुपुर्द कर दिया। 1936 में उन्हें रिहा कर दिया गया। इसके पश्चात् भी नजरबन्द एवं जेल का लुका–छिपी खेल चलता रहा किन्तु उन्होंने सामाजिक सरोकारों से कभी मुँह नहीं मोड़ा।

भील–गरासियों के हितों के लिए देश की आज़ादी में अन्य जिन जन नेताओं का योगदान रहा, उनमें प्रमुख थे – माणिक्यलाल वर्मा, भोगीलाल पण्ड्या, मामा बालेश्वर दयाल, बलवन्तसिंह मेहता, हरिदेव जोशी, गौरीशंकर उपाध्याय आदि। इन्होंने भील क्षेत्रों में शिक्षण संस्थाएँ, प्रौढ़ शालाएँ, हॉस्टल आदि स्थापित किये। साथ ही, उन आदिवासियों को कुप्रवृत्तियों को छौड़ने के लिए प्रेरित किया।

राजस्थान के देशी रियासतों के इतिहास में बिजौलिया किसान आन्दोलन (1897–1941) का विशिष्ट स्थान है। दीर्घ काल तक चलने वाले इस आन्दोलन में किसान वर्ग ठिकाने और मेवाड़ राज्य की सम्मिलित शक्ति से जूझता रहा। इस आन्दोलन में केवल पुरुषों ने ही भाग नहीं लिया, बल्कि स्त्रियों व बालकों ने भी सक्रियता दिखायी। यह आन्दोलन पूर्णतया स्वावलम्बी एवं अहिंसात्मक था। यह आन्दोलन प्रारम्भ में विजयसिंह पथिक के नेतृत्व में चला। इस आन्दोलन में कृषक वर्ग ने अभूतपूर्व साहस, धैर्य और बलिदान का परिचय दिया, चाहे यह अपने मंतव्य में सफल नहीं हो सका। यह आन्दोलन सामंती व्यवस्था के विरुद्ध भयंकर प्रहार था। यह आन्दोलन मेवाड़ राज्य की सीमा तक ही सीमित नहीं रहा। इस आन्दोलन ने कालान्तर में माणिक्यलाल वर्मा जैसे तेजस्वी नेता को जन्म दिया, जो बाद में मेवाड़ राज्य में उत्तरदायी सरकार की स्थापना हेतु अनेक आन्दोलनों का प्रणेता बना। हमें यह जान लेना चाहिए कि राजस्थान में कृषक आन्दोलन स्वंय के बलबूते पर था और इसका नेतृत्व पूर्णतः गैर पेशेवर नेताओं एवं अत्यन्त साधारण किसान वर्ग ने किया था, चाहे उनका आधार जातिगत रहा। बिजौलिया आन्दोलन में धाकड़ जाति की महती भूमिका रही। सीकर और शेखावटी आन्दोलनों में जाट जाति का वर्चस्व रहा। मेवाड़ और सिरोही राज्यों के किसान आन्दोलनों के पीछे भील और गरासिया जातियों की शक्ति रही। इसी प्रकार अलवर और भरतपुर राज्यों में मेवों की मुख्य भूमिका रही। इस प्रकार इन आन्दोलनों को सुनियोजित रूप से संचालित करने का श्रेय जाति पंचायतों एवं जाति संगठनों को दिया जा सकता है।

राजस्थान के किसान आन्दोलनों में बरड़ (बूँदी) किसान आन्दोलन (1921–43), नीमराणा (अलवर) किसान आन्दोलन (1923–25), बेगू (चित्तौड़गढ़), किसान आन्दोलन (1922–25), शेखावाटी किसान आन्दोलन (1924–47), मारवाड़ किसान आन्दोलन (1924–47) प्रमुख है। यह स्मरणीय है कि इन

किसान आन्दोलनों में स्त्रियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। राजस्थान के ये किसान आन्दोलन सामन्त विरोधी स्वरूप लिये हुये थे और इन्होंने कालान्तर में जागीरदारी उन्मूलन की भूमिका तैयार की। राजस्थान के किसान आदोलनों में जबरदस्त उत्साह देखा जा सकता है। ये आन्दोलन सामान्यतः अहिंसात्मक रहे। इन आन्दोलनों ने प्रजामण्डल की जमीन तैयार कर दी थी।

## दलित आन्दोलन

स्वतन्त्रतापूर्व राजस्थान में दलितों में भी क्रियाशील जागरण दिखाई देता है। दलितों की स्वतन्त्रता आन्दोलन में भूमिका उनके सामाजिक एवं राजनीतिक जागृति का प्रतीक थीं। यह ध्यान देन योग्य है कि दलितों ने राजस्थान में प्रजामण्डल आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेकर राजस्थान में आजादी के आन्दोलन को विस्तृत सामाजिक आधार प्रदान किया। 1920 और 1934 के समय दलितों ने अजमेर–मेरवाड़ा के राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। राजपूताना के दलित जातियों में सामाजिक और राजनीतिक जागृति के चिह्न दिखाई देते हैं। इसका विशेष कारण यह था कि कोटा, जयपुर, धौलपुर और भरतपुर की रियासतों में दलितों का बाहुल्य था। अतः इन राज्यों में दलितों ने सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलनों में सक्रिय भूमिका प्रदर्शित की। इसी कारण इन राज्यों ने इनकी मांगों की ओर ध्यान दिया। 1945–46 में उणियारा में बैरवा जाति ने नागरिक असमानता विरोधी आन्दोलन चलाकर अपनी सक्रियता का परिचय दिया।

## आर्य समाज की भूमिका

राजस्थान में राजनीतिक चेतना जागृत करने एवं शिक्षा प्रसार में स्वामी दयानंद सरस्वती एवं आर्यसमाज ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। स्वामी दयानंद राजस्थान में सर्वप्रथम 1865 ई. में करौली के राजकीय अतिथि के रूप में आए। उन्होंने किशनगढ़, जयपुर, पुष्कर एवं अजमेर में अपने उपदेश दिए। स्वामीजी का राजस्थान में दूसरी बार आगमन 1881 ई. में भरतपुर में हुआ। वहाँ से स्वामीजी जयपुर, अजमेर, ब्यावर, मसूदा एवं बनेड़ा होते हुए चित्तौड़ पहुँचे, जहाँ कविराज श्यामलदास ने उनका स्वागत किया। महाराणा सज्जनसिंह (1874–1884 ई.) के अनुरोध पर स्वामीजी उदयपुर पहुँचे, वहाँ महाराणा ने उनका आदर–सत्कार किया। स्वामी दयानंद सरस्वती ने उदयपुर में आर्यधर्म का प्रचार किया। उनके उपदेशों को सुनने के लिए मेवाड़ के अनेक सरदार नित्य उनकी सभा में आया करते थे।

अगस्त, 1882 को स्वामी दयानन्द दुबारा उदयपुर पहुँचे। उदयपुर में स्वामीजी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय संस्करण की भूमिका लिखी। यहीं फरवरी, 1883 ई. में स्वामीजी के सान्निध्य में 'परोपकारिणी सभा' की स्थापना हुई। कालान्तर में मेवाड़ में विष्णु लाल पंड्या ने आर्य समाज की स्थापना की। 1883 ई. में ही स्वामीजी जोधपुर गए। जोधपुर महाराजा जसवन्तसिंह, सर प्रतापसिंह तथा रावराजा तेजसिंह पर स्वामीजी के उपदेशों का काफी प्रभाव पड़ा। अपने व्याख्यानों में स्वामीजी क्षत्रिय नरेशों के चरित्र संशोधन और गौरक्षा पर विशेष बल दिया करते थे। भरी सभा में उन्होने वेश्यागमन के दोष बतलाये और महाराजा जसवन्तसिंह की 'नन्हीजान' के प्रति प्यार पर उन्हें भी फटकार लगाई। कहा जाता है कि नन्हींजान ने स्वामीजी को विष दिलवा दिया, जिससे उनकी तबीयत बिगड़ गई। स्वामीजी को अजमेर ले जाया गया। काफी चिकित्सा के उपरान्त भी वह स्वस्थ नहीं हुए और अजमेर में ही 1883 ई. में इनका देहान्त हो गया।

दयानन्द सरस्वती ने स्वधर्म, स्वराज्य, स्वदेशी और स्वभाषा पर जोर दिया। उन्होंने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' को उदयपुर में हिन्दी भाषा में लिखा। अजमेर में 'आर्य समाज' की स्थापना की गई। स्वामी दयानंद सरस्वती एवं आर्य समाज ने राजस्थान में स्वतंत्र विचारों के लिए पृष्ठभूमि तैयार की। आर्य समाज ने हिन्दी भाषा, वैदिक धर्म, स्वदेशी एवं स्वदेशाभिमान की भावना पैदा की। राजस्थान में राजनीतिक जागृति पैदा करने एवं शिक्षा प्रसार के लिए भी आर्य समाज ने सराहनीय कार्य किया। आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी, अंग्रेजी भाषा के साथ ही वैदिक धर्म एवं संस्कृत

की शिक्षा भी दी जाने लगी। आर्य समाज ने सामाजिक कुरीतियों का विरोध किया। अजमेर में हरविलास शारदा व चान्दकरण शारदा ने सामाजिक कुरीतियों के विरोध में आवाज उठायी। आर्य समाज ने खादी प्रचार, हरिजन उद्धार, शिक्षा के प्रचार–प्रसार को अपना मिशन बनाया। भरतपुर में जनजागृति पैदा करने वाले मास्टर आदित्येन्द्र व जुगल किशोर चतुर्वेदी आर्यसमाज के ही कार्यकर्त्ता थे।

## समाचार पत्रों का योगदान

अज्ञानता को मिटाने और जन चेतना के प्रसार में प्रेस की भूमिका निर्णायक होती है। राजस्थान में समाचार पत्रों ने जन जागरण में जो योगदान दिया, उसका प्रमाण बिजौलिया किसान आन्दोलन में देखने को मिला। जब बिजौलिया के अत्याचारों का वर्णन 'प्रताप' नामक समाचार पत्र में छपा तो पूरे देश में इस पर चर्चा होने लगी। राजस्थान के राज्यों के आन्तरिक मामलों का ज्ञान समाचार पत्रों के माध्यम से जनता में पहुँचने लगा। विजय सिंह पथिक, रामनारायण चौधरी, जयनारायण व्यास आदि नेताओं ने राज्य की समस्याओं के विषय में समाचार पत्रों के माध्यम से चर्चा प्रारम्भ की। 'राजपूताना गजट' (1885) और 'राजस्थान समाचार' (1889) बहुत थोड़े समय के पश्चात् ही बन्द हो गये। 1920 में पथिक ने 'राजस्थान केसरी' का प्रकाशन पहले वर्धा से और फिर अजमेर से प्रारम्भ किया। 1922 में राजस्थान सेवा संघ ने 'नवीन राजस्थान' प्रारम्भ किया जिसमें आदिवासी एवं किसान आन्दोलनों का समर्थन किया गया। 1923 में वह बन्द हो गया परन्तु 'तरूण राजस्थान' के नाम से इसका प्रकाशन पुनः प्रारम्भ किया गया। इसमें भी कृषक आन्दोलनों एवं अत्याचारों पर व्यापक चर्चा हुई। इस पत्र के सम्पादन में शोभालाल गुप्त, रामनारायण चौधरी, जयनारायण व्यास आदि नेताओं ने सराहनीय योगदान दिया। जोधपुर, सिरोही तथा अन्य राज्यों के निरंकुश शासकों के विरुद्ध इस पत्र में आवाज उठाई गई। 1923 में ऋषिदत्त मेहता ने ब्यावर से 'राजस्थान' नाम का साप्ताहिक अखबार निकालना प्रारम्भ किया। 1930 के बाद समाचार पत्रों की संख्या बढ़ी। आगे के वर्षों में 'नवज्योति', 'नवजीवन', 'जयपुर समाचार', 'त्याग भूमि', 'लोकवाणी' आदि पत्रों का प्रकाशन प्रारम्भ होने लगा। 'त्याग भूमि' (1927) में गाँधीवादी विचारधारा का प्रतिपादन होता था और इसका सम्पादन हरिभाऊ उपाध्याय ने किया। इसमें गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम पर अधिक बल दिया गया। देशभक्ति, समाज सुधार, स्त्रियों के उत्थान सम्बन्धी लेख इसमें सामान्यतया होते थे।

समाचार पत्रों ने राष्ट्रीय स्तर पर राजस्थान की समस्याओं का खुलासा किया। विभिन्न मुद्दों पर राष्ट्रीय सहमति बनाने में योगदान दिया। रियासत से जुड़े आन्दोलनों पर प्रकाश डालकर उन्हें बहस का हिस्सा बनाया। पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से शोषण एवं अत्याचार का पर्दाफाश हुआ, उन पर चर्चा होने लगी। रचनात्मक कार्यक्रमों को अपनाने की प्रेस की अपील का अच्छा असर हुआ। शिक्षित वर्ग चाहे कम था, परन्तु लोग अखबार को दूसरों से सुनने में बड़ी रुचि लेने लगे। पढ़े–लिखे लोगों में भी पत्र–पत्रिकाओं को पढ़ने में रुचि तेजी से बढ़ी।

## शासकों की भूमिका

मेवाड़ के महाराणा फतहसिंह, अलवर के महाराजा जयसिंह और भरतपुर के महाराजा कृष्णसिंह बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में राजस्थान के ऐसे शासक थे, जो अपनी प्रगतिशील और राष्ट्रीय विचारधारा और अंग्रेजों को राज्य के अंदरूनी मामलों में दखल देने से रोकने के कारण ब्रिटिश सरकार के कोपभाजन बने। अंग्रेजी शिकंजे से परेशान एवं अपदस्थ मेवाड़ के महाराणा के बारे में 'तरुण राजस्थान' ने अपने 10 जनवरी, 1924 के अंक में लिखा, "यदि महाराणा गोरी सरकार के अन्ध भक्त होते तो शायद मेवाड़ के प्राचीन गौरव का नाश करने वाला यह अत्याचारपूर्ण हस्तक्षेप न हुआ होता।" यह भी उल्लेखनीय है कि अलवर के शासक जयसिंह ने 1903 के आस–पास बाल–विवाह, अनमेल विवाह और मृत्यु भोज पर रोक लगा दी। रियासत की राजभाषा हिन्दी घोषित कर दी। राज्य में पंचायतों का जाल बिछा दिया। महाराजा ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय एवं सनातन धर्म कॉलेज,

लाहौर को उदारतापूर्वक वित्तीय सहायता दी। ऐसे प्रगतिशील शासक से ब्रिटिश सरकार का असन्तुष्ट होना स्वाभाविक था। अन्त में, अलवर महाराजा को निर्वासित होना पड़ा। इस प्रकार, राजस्थान के केवल कतिपय शासकों ने ही यहाँ के जन आन्दोलनों के प्रति सहानुभूति रखने एवं प्रगतिशील विचारों के प्रकटीरण की हिम्मत जुटाई, परन्तु अपवाद स्वयं बेमिसाल होते हैं।

## व्यापारी वर्ग की भूमिका

सत्ता के निरंकुश प्रयोग के विरुद्ध आवाज उठाने में व्यापारी वर्ग भी पीछे नहीं रहा। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् इस वर्ग की धारणा एवं विचारधारा सत्ता वर्ग के विरुद्ध होने लगी। कलकत्ता में एक प्रभावशाली मारवाड़ी मण्डल विकसित हो रहा था, जिसने राष्ट्रीय विचारधारा को प्रोत्साहित करने का निश्चय किया। रियासतों में व्यापारी वर्ग को ठिकानेदारों की अहमन्यता खटकती थी। वे राजनीतिक जागरूकता लाने के लिए अपने धन का प्रयोग करना चाहते थे, जिससे सामन्ती अनुत्तरदायी व्यवहार नियन्त्रित हो सके। रियासतों में राजनीतिक चेतना जागृत करने वालों में कतिपय व्यापारी वर्ग की भूमिका सराहनीय रही, उदाहरणार्थ– बीकानेर में खूबराम सर्राफ तथा सत्यनारायण सर्राफ, जोधपुर में आनन्दराज सुराणा, चांदमल सुराणा, भंवरलाल सर्राफ, प्रयागराम भण्डारी तथा जयपुर में टीकाराम पालीवाल, गुलाबचन्द कासलीवाल आदि।

ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी एक कुशल उद्योगपति थे किन्तु उनका राजनीतिक कार्यक्षेत्र अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, राव गोपाल सिंह खरवा और विजयसिंह पथिक के साथ ही था। क्रांति के मार्ग पर ये पाँचों राष्ट्रवादी नेता एक–दूसरे के पूरक थे। दुर्भिक्ष, बाढ़ या भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदाओं से त्रस्त जनता की उन्होंने सदैव सेवा की। सेठ राठी हिन्दी भाषा के भारी प्रशंसक थे। उन्होंने 1914 में अपनी कृष्णा मिल के बहीखातों का तथा अपना सम्पूर्ण कार्य हिन्दी में ही करने का संकल्प लेकर अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष अमृतलाल चक्रवर्ती की प्रेरणा से राठी ने ब्यावर में 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की और अजमेर–मेरवाड़ा की अदालतों में नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रयोग के लिए आन्दोलन चलाया। इससे प्रभावित होकर अंग्रेज कमिश्नर ने राजकीय कार्य नागरी लिपि और हिन्दी भाषा में करना स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार एक व्यवसायी एवं उद्योगपति होने के बावजूद सेठ राठी ने स्वभाषा के प्रयोग सहित स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोगों को बढ़ावा देकर राष्ट्र प्रेम की भावना को पोषित किया।

## खादी का प्रयोग

राजस्थान के राज्यों में खादी के प्रचार ने स्वतन्त्रता की भावना को लोकप्रिय तथा व्यापक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा लोगों को इस आन्दोलन की ओर आकृष्ट किया। गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम का प्रचार ऐसा आवरण था, जिस पर किसी निरंकुश शासक को भी आपत्ति करने का औचित्य दिखाई नहीं पड़ता था। खादी का प्रयोग गाँव की निर्धन जनता के लिए एक रोजगार का साधन हो सकता था, इसलिए इस कार्यक्रम को रोकने में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती थी। समय के व्यतीत होने के साथ–साथ गाँधी टोपी पहनना, खादी का प्रयोग करना स्वतन्त्रता आन्दोलन के हिस्से बन गये। जमनालाल बजाज पर इस आन्दोलन की देखभाल का जिम्मा था। गोकुल भाई भट्ट तथा अन्य खादी कार्यकर्त्ताओं के सम्मानार्थ प्रकाशित ग्रंथों से इन शान्त तथा जनप्रिय चर्चित चेहरों के योगदान पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। खादी को प्रश्रय प्रदान करना, छूआछूत समाप्त करना अथवा हरिजनोद्धार इस युग के नये मूल्यों को प्रोत्साहन देने वाले कार्यक्रम थे, जिनसे जनजागरण प्रभावी हो सका।

## महिलाओं की भूमिका

राजस्थान में राजनीतिक चेतना और नागरिक अधिकारों के लिए अनवरत चले आन्दोलनों में महिलाओं की भूमिका भी श्लाघनीय रहीं। इसमें अजमेर की प्रकाशवती सिन्हा का नाम विशेष उल्लेखनीय है। 1930 से 1947 तक अनेक महिलाएँ जेल गई। इनका नेतृत्व करने वाली

साधारण गृहणियाँ ही थीं, जिनकी गिनती अपने कार्यों तथा उपलब्धियों से असाधारण श्रेणी में की जाती है। इनमें अंजना देवी (पत्नी–रामनारायण चौधरी), नारायण देवी (पत्नी माणिक्य लाल वर्मा), रतन शास्त्री (पत्नी हीरालाल शास्त्री) आदि थीं। 1942 की अगस्त क्रांति में छात्राओं ने अद्‌भुत शौर्य का प्रदर्शन किया। कोटा शहर में तो रामपुरा पुलिस कोतवाली पर अधिकार करने वालों में छात्राएँ भी शामिल थीं। राजस्थान में जन चेतना के विकास में रमादेवी पाण्डे, सुमित्रा देवी भार्गव, इन्दिरा देवी शास्त्री, विद्या देवी, गौतमी देवी भार्गव, मनोरमा पण्डित, मनोरमा टण्डन, प्रियवंदा चतुर्वेदी और विजयाबाई का योगदान उल्लेखनीय रहा। डूँगरपुर की एक भील बाला कालीबाई 19 जून, 1947 को रास्तापाल सत्याग्रह में अपने शिक्षक सेंगाभाई को बचाते हुए शहीद हुई।

## क्रांतिकारियों की भूमिका

भारतीय परिप्रेक्ष्य के अनुरूप ही राजपूताना में क्रांतिकारियों की गतिविधियाँ देखने को मिलती है। यहाँ भी शासक वर्ग ने ब्रिटिश सत्ता के समान ही सामान्यतः राष्ट्रवादी गतिविधियों पर अपना शिकंजा कस दिया। ऐसी परिस्थितियों में क्रांतिकारी गतिविधियों को अपनी जगह बनाने का मौका मिला। बंगाल में सक्रिय क्रांतिकारियों ने राजपूताना में भी सम्पर्क स्थापित करके अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार किया। राजपूताना में क्रांतिकारी गतिविधियों से सम्बद्ध रहने वालों में विजयसिंह पथिक, अर्जुनलाल सेठी, केसरी सिंह बारहठ, प्रतापसिंह बारहठ, राव गोपाल सिंह खरवा के नाम गिनाये जा सकते हैं। यद्यपि क्रांतिकारियों का आन्दोलन जन साधारण में अपनी जमीन तैयार न कर सका, फिर भी सामंती समाज की बदहाली, शासकों की उदासीनता व अंग्रेजों के दमन की भूमिका अविस्मरणीय रही। राजस्थान में भी पूरे राष्ट्र के समान सामान्यतः गांधीवादी तौर–तरीके ही लोकप्रिय रहे।

अंग्रेज सरकार क्रांतिकारी गतिविधियों को समाप्त करने पर आमदा थी। इसी सिलसिले में वायसराय लार्ड मिण्टो ने अगस्त 1909 में राजस्थान में राजाओं को अपने–अपने राज्यों में क्रांतिकारी साहित्य व समाचार पत्रों पर रोक लगाने तथा क्रांतिकारी गतिविधियों को कुचलने के निर्देश दिये। फलतः राज्यों ने समाचार पत्रों पर रोक लगाने के साथ ही क्रांतिकारियों के आपसी व्यवहार एवं व्याख्यान देने पर रोक लगा दी। परन्तु राज्यों के ये प्रतिबन्ध कारगर नहीं हुए और दृढ़ प्रतिज्ञ एवं निष्ठावान देशभक्त हिंसात्मक गतिवधियों की ओर प्रवृत्त हुए। राजस्थान के क्रांतिकारियों का जनक शाहपुरा का बारहठ परिवार था। इनमें ठाकुर केसरीसिंह बारहठ राष्ट्रीय परिस्थितियों से भली–भाँति अवगत थे और ब्रिटिश सरकार की नीतियों के खिलाफ इनमें तीव्र आक्रोश था। 1903 में केसरी सिंह ने 'चेतावनी का चूँगटया" नामक सोरठा मेवाड़ महाराणा फतहसिंह को लिखकर भेजे, जिसके कारण उन्होंने दिल्ली दरबार में भाग नहीं लिया। क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए धन जुटाने के लिए उन्होंने कुछ लोगों के साथ मिलकर कोटा के महन्त साधु प्यारेलाल की हत्या कर दी। इस केस में इन्हें बीस वर्ष की सजा दी गई और बिहार की हजारी बाग जेल में रखा गया, परन्तु 1919 में वे शीघ्र जेल से मुक्त हो गये। कोटा पहुँचने पर उन्हें अपने पुत्र प्रतापसिंह की शहादत का समाचार मिला, परन्तु उन्होंने धैर्य रखा। बाद में गांधीजी के सम्पर्क के कारण केसरी सिंह बारहठ अहिंसा के विचारों के पोषक हो गये।

जयपुर में क्रांतिकारियों की पौध तैयार करने वाले अर्जुन लाल सेठी ने राजकीय नौकरी को ठोकर मारकर देश सेवा का कठिन मार्ग चुना। उनके द्वारा स्थापित वर्धमान पाठशाला क्रांतिकारियों की नर्सरी थी। प्रतापसिंह बारहठ जैसे व्यक्ति इस पाठशाला के छात्र थे। इन्हें एक महन्त की हत्या के झूठे आरोप में जेल डाल दिया। जेल से 6 वर्ष बाद मुक्त (1920) होने के बाद राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया।

खरवा ठाकुर गोपालसिंह ने रासबिहारी बोस एवं बंगाल के क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आने के कारण सशस्त्र बल द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति का मन बनाया। 21 फरवरी, 1915 को सशस्त्र क्रांति की शुरूआत करने का राजस्थान में

उत्तरदायित्व खरवा ठाकुर ने लिया। मगर योजना असफल होने पर उन्हें टाडगढ़ में नजर बन्द रखा गया। जहाँ से वे फरार हो गये, मगर पुनः बन्दी बनाकर अजमेर जेल में रखा गया। जेल से मुक्त (1920) होने के पश्चात् वे शांतिपूर्ण राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न हो गये।

कुछ अन्तराल के बाद 1931 में भगतसिंह को फांसी देने से उग्रवादी पुनः सक्रिय हो उठे। अजमेर, और पुष्कर की दीवारों पर 'भगतसिंह जिन्दाबाद' के नारे लिखे गये। चिरंजीलाल ने क्रांतिकारी दल की स्थापना की। ज्वालाप्रसाद शर्मा, रमेशचन्द्र व्यास जैसे लोग क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़े।

## कवियों का योगदान

राजस्थान की स्वातन्त्र्य चेतना में कवियों ने लोकगीतों के माध्यम से जनता को जाग्रत किया। ये लोक गीत राज्य की सभी आंचलिक भाषाओं में वहाँ के स्थानीय कवियों तथा गीतकारों द्वारा रचे गये थे। इन गीत एवं कविताओं से परतन्त्रता काल में अशिक्षित ओर अर्द्धशिक्षित जन समूह प्रेरणा एवं प्रोत्साहन प्राप्त करता रहा था। भरतपुर राज्य के निवासी हुलासी का नाम सर्वप्रथम आता है, जिन्होंने वीर रस के गीतों के माध्यम से अंग्रेजों का विरोध करने का आह्वान उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही कर दिया था। इस ब्राह्मण कवि ने अपनी वीर रस की कविताओं में राजस्थान के तत्कालीन राज्यों की तुलना में भरतपुर के वीरों द्वारा अंग्रेजों का अंतिम दम तक विरोध करने का ओजस्वी वर्णन किया है। भरतपुर राज्य के राजनीतिक आन्दोलनों से सम्बन्धित वर्तमान काल में जितनी भी काव्य रचनाएँ हुई हैं, उनमें सबसे अधिक योगदान पूर्णसिंह की रचनाओं का रहा है। ग्रामीण कवि होने के साथ–साथ पूर्णसिंह कर्मठ कार्यकर्त्ता भी था। उसने 1939 से 1947 तक राज्य में जितने भी आन्दोलन हुए, उनमें सक्रियता का प्रदर्शन किया। समय–समय पर आयोजित सम्मेलनों में इसके गीतों की धूम रहती थी। राजस्थान में जन जागरण का हुंकार फूंकने वालों में बूँदी के सूर्यमल्ल मीसण (1815–1868) तथा मारवाड़ के शंकरदान सामोर (1824–1878) का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

## प्रजामण्डल आन्दोलन

राजस्थान की रियासतों में प्रजामण्डलों के नेतृत्व में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए नेताओं को कठोर संघर्ष करना पड़ा। यातनाएँ झेलनी पड़ी। कारावास में रहना पड़ा। उनके परिवारों को भारी संकट का सामना करना पड़ा। यहाँ तक कि अपने जीवन को भी दाव पर लगाना पड़ा। प्रजामण्डलों के मार्गदर्शन में ही राजस्थान की विभिन्न रियासतों में राष्ट्रीय आन्दोलन की हलचल हुई। दुर्भाग्य की बात यह रही कि राजस्थान की जनता को तीन शक्तियों यथा–राजा, ठिकानेदार और ब्रिटिश सरकार का सामना करना पड़ा। ये तीनों शक्तियाँ मिलकर जनता के संघर्ष का दमन करती रहीं। परन्तु राजस्थान की रियासतों में होने वाले आन्दोलनों ने यह प्रमाणित कर दिया कि इन राज्यों की जनता भी ब्रिटिश भारत की जनता के साथ कन्धा मिलाकर भारत को स्वतन्त्र कराना चाहती है। जयपुर में प्रजामण्डल का नेतृत्व जमनालाल बजाज, हीरालाल शास्त्री जैसे दिग्गज नेताओं ने किया जबकि जोधपुर में जयनारायण व्यास के मार्गदर्शन में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए संघर्ष चला, वहीं सिरोही में गोकुल भाई भट्ट के शीर्ष नेतृत्व में।

राजस्थान में राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं की पहली पीढ़ी में चार प्रमुख नेताओं का नाम उल्लेखनीय है, यथा–अर्जुनलाल सेठी (1880–1941), केसरीसिंह बारहठ (1872–1941), स्वामी गोपालदास (1882–1939) एवं राव गोपालसिंह (1872–1956)। अर्जुनलाल सेठी ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त की थी और अपना कार्य चौंमू के ठाकुर देवीसिंह के निजी सचिव के रूप में प्रारम्भ किया लेकिन शीघ्र ही अपना यह पद त्याग दिया। कुछ समय तक मथुरा के एक जैन स्कूल में अध्यापक रहे और फिर 1906 में जयपुर आ गये। इसके पश्चात् वे युवकों को भावी क्रान्ति के लिए तैयार करने में लग गये।

केसरी सिंह बारहठ मेवाड़ में शाहपुरा में पैदा हुए। वे चारण तथा राजपूतों में कुछ सुधार लाना चाहते थे

उन्होंने राजपूतों में शिक्षा प्रसार पर बल दिया और सामाजिक कुरीतियों से बचने की सलाह दी।

स्वामी गोपालदास का जन्म चूरू के समीप हुआ था। उनका जीवन इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है कि निरंकुश शासन में सार्वजनिक हित में कार्य करने वाले को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। बीकानेर के प्रबुद्ध शासक गंगासिंह ने स्वामी गोपालदास को परेशान करने में कोई कमी नहीं की, जबकि उनका दोष यह था कि वे बीकानेर की वास्तविक स्थिति से लोगों को अवगत करा रहे थे। सच तो यह है कि उन्होंने कई रचनात्मक कार्य किये, जैसे चूरू में लड़कियों के लिए स्कूल खोला, तालाबों की मरम्मत कराई ओर कुएं खुदवाए।

खरवा का ठाकुर राव गोपालसिंह ने सामंत परिवार में जन्म लेकर भी देश के भविष्य के लिए अपनी वंश परम्परागत जागीर को देश की आजादी के लिए दांव पर लगा दिया। उनके बारे में ठाकुर केसरीसिंह ने लिखा था, "जिस प्रकार पंजाब को लाला लाजपतराय पर और महाराष्ट्र को बाल गंगाधर तिलक पर गर्व है, उसी प्रकार राजस्थान को राव गोपालसिंह खरवा पर गर्व है।"

इन उक्त नेताओं की कार्य प्रणाली पर विचार करें तो कहा जा सकता है कि इन नेताओं की योजनाएँ तथा गतिविधियाँ सामाजिक कार्य करने, शिक्षा को प्रोत्साहित करने तथा देशप्रेम की भावना फैलाने की थी। यह उल्लेखनीय है कि उस समय अप्रगतिशील रूढ़िवादी घटनाओं पर टीका–टिप्पणी आपराधिक श्रेणी में गिनी जाती थी। समाचार पत्रों का बाहर से मंगवाना, एक टाइप मशीन अथवा चक्रमुद्रण यन्त्र का किसी व्यक्ति के पास होना एक अपराध माना जाता था। प्रचलित व्यवस्था के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण रखना संदिग्ध माना जाता था। पुरानी मान्यताओं को तर्क की कसौटी पर जाँचनें तथा राजनीतिक एवं प्रशासनिक नीतियों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण रखने को क्रांतिकारी समझा जाता था। रास बिहारी घोष, महर्षि अरविन्द, शचीन्द्र सान्याल से मिल लेना ही क्रांतिकारी माने जाने के लिए पर्याप्त समझा जाता था। यह महत्वपूर्ण नहीं है कि जो कार्य सेठी, बारहट, खरवा राव, स्वामी गोपालदास आदि ने किया, उसमें से उन्हें सफलता मिली या असफलता तथा वे संस्थागत रूप धारण कर सके अथवा धराशायी हो गये, अपितु महत्वपूर्ण यह है कि वे लोगों को कितना प्रभावित कर पाये। इस मायने में वे सफल रहे। इन नेताओं ने अपने बलिदान से पुराने सामन्ती ढांचे के अन्यायपूर्ण आचरण का पर्दाफाश किया।

**कोटा** राज्य में जन–जागृति के जनक पं. नयनूराम शर्मा थे। उन्होंने थानेदार के पद से इस्तीफा देकर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया था। वे विजयसिंह पथिक द्वारा स्थापित राजस्थान सेवा संघ के सक्रिय सदस्य बन गये। उन्होंने कोटा राज्य में बेगार विरोधी आन्दोलन चलाया, जिसके फलस्वरूप बेगार प्रथा की प्रताड़ना में कमी आई। 1939 में पं. नयनूराम शर्मा और पं. अभिन्न हरि ने कोटा राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने के उद्देश्य को लेकर कोटा राज्य प्रजामण्डल की स्थापना की। प्रजामण्डल का पहला अधिवेशन शर्मा की अध्यक्षता में मांगरोल (बाराँ) में सम्पन्न हुआ।

**अजमेर** में जमनालाल बजाज की अध्यक्षता में 'राजपूताना मध्य भारत सभा' का आयोजन (1920) किया गया, जिसमें अर्जुन लाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, राव गोपालसिंह खरवा, विजयसिंह पथिक आदि ने भाग लिया। इसी वर्ष देश में खिलाफत आन्दोलन चला। अजमेर में खिलाफत समिति की बैठक हुई, जिसमें डॉ. अन्सारी, शेख अब्बास अली, चांदकरण शारदा आदि ने भाग लिया। अक्टूबर, 1920 में 'राजस्थान सेवा संघ' को वर्धा से लाकर अजमेर में स्थापित किया गया, उसका उद्देश्य राजस्थान की रियासतों में चलने वाले आन्दोलनों को गति देना था। उसी समय रामनारायण चौधरी वर्धा से लौटकर अपना कार्य क्षेत्र अजमेर बना चुके थे। अजमेर में 15 मार्च, 1921 को द्वितीय राजनीतिक कांफ्रेस का आयोजन हुआ, जिसमें मोतीलाल नेहरू उपस्थित थे। मौलाना शौकत अली ने सभा की अध्यक्षता की थी। सभा में विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का आह्वान किया गया। पंडित गौरीशंकर भार्गव ने अजमेर में

विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार की अगुवाई कर प्रथम गांधीवादी बनने का सौभाग्य प्राप्त किया। जब 'प्रिंस ऑफ वेल्स' का अजमेर आगमन (28 नवम्बर, 1921) हुआ, तो उसका स्वागत के स्थान पर बहिष्कार किया गया, हड़ताल की गई तथा दुकाने बन्द की गई। प्रिंस की यात्रा की व्यापक प्रतिक्रिया हुई।

**जैसलमेर** रेगिस्तान के धोरों के मध्य एक पिछड़ी हुई छोटी रियासत थी। यहाँ के सागरमल गोपा ने जैसलमेर की जनता को महारावल जवाहर सिंह के निरंकुश और दमनकारी शासन के विरुद्ध जागृत किया। सागरमल गोपा ने 1940 में 'जैसलमेर में गुण्डाराज' नामक पुस्तक छपाकर वितरित करवा दी। अतः महारावल ने शीघ्र ही उसे राज्य से निर्वासित कर दिया। गोपा नागपुर चला गया और वहाँ से जैसलमेर के दमनकारी शासन के विरुद्ध प्रचार करता रहा। मार्च, 1941 में उसके पिता का देहान्त हो गया, तब ब्रिटिश रेजीडेण्ट की स्वीकृति के पश्चात् ही वह जैसलमेर पहुँच सका। रेजीडेण्ट ने आश्वासन दिया था कि उसके विरुद्ध राज्य सरकार का कोई आरोप नहीं है, अतः वह जैसलमेर आ सकता है तथा उसे किसी प्रकार के दुर्व्यवहार का भय नहीं होना चाहिए। इस प्रकार गोपा जैसलमेर पहुँचा। जैसलमेर जाकर वह लगभग दो माह पश्चात् लौट रहा था, जब उसे अचानक बन्दी (22 मई, 1941) बना लिया गया। बन्दी अवस्था में उसे गम्भीर एवं अमानवीय यातनाएँ दी गई। अन्ततः उसे राजद्रोह के अपराध में 6 वर्ष की कठोर कारावास की सजा दी गई। जेल में थानेदार गुमानसिंह यातनाएँ देता रहा, जिससे उसका जीवन नारकीय हो गया था। गोपा द्वारा जयनारायण व्यास आदि को यातनाओं के सम्बन्ध में पत्र लिखे गये। जयनारायण व्यास ने रेजीडेण्ट को पत्र लिखकर वास्तविक स्थिति का पता लगाने का आग्रह किया। रेजीडेण्ट ने 6 अप्रैल, 1946 को जैसलमेर जाने का कार्यक्रम बनाया, उधर 3 अप्रैल, 1946 को ही जेल में गोपा पर मिट्टी का तेल डालकर जला दिया गया। यह खबर जंगल में आग की तरह फैल गयी किन्तु शासन ने गोपा के रिश्तेदारों तक को नहीं मिलने दिया। लगभग 20 घण्टे तड़पने के बाद 4 अप्रैल को वे चल बसे। पूरा नगर 'सागरमल गोपा जिन्दाबाद' के नारों से गूंज उठा। पण्डित नेहरू तथा जयनारायण व्यास सहित अनेक शीर्ष नेताओं ने इस काण्ड की भर्त्सना की। राजस्थान जब कभी भी स्वतन्त्रता सेनानियों को याद करेगा, गोपा का नाम प्रथम पंक्ति में अमर रहेगा।

**भरतपुर** में जन–जागृति पैदा करने वालों में जगन्नाथदास अधिकारी और गंगाप्रसाद शास्त्री प्रमुख थे। इन्होंने 1912 में 'हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना की, जिसने शीघ्र ही लोकप्रियता प्राप्त कर एक विशाल पुस्तकालय का रूप धारण कर लिया। भरतपुर के तत्कालीन महाराजा किशनसिंह अन्य शासकों की तुलना में जागरूक थे। उन्होंने हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया। गाँवों और नगरों में स्वायत्तशासी संस्थाओं को विकसित किया और राज्य में एक अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन किया। वह राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना के पक्ष में था। परन्तु अंग्रेज सरकार ने उसके प्रगतिशील विचारों के दूरगामी परिणामों को सोचकर उसे गद्दी छोड़ने के लिए विवश किया। नये शासक ने सभाओं एवं प्रकाशनों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इतना ही नहीं राष्ट्रीय नेताओं के चित्र रखना अपराध मान लिया गया। फिर भी, भरतपुर में जन–जागरण का कार्य चोरी–छिपे चलता रहा। गोपीलाल यादव, मास्टर आदित्येन्द्र, जुगलकिशोर चतुर्वेदी आदि के नेतृत्व में भरतपुर राज्य प्रजामण्डल अपनी गतिविधियाँ चलाता रहा।

**जोधपुर** के प्रजामण्डल के इतिहास में बालमुकुन्द बिस्सा का नाम स्मरणीय रहेगा। मारवाड़ के एक छोटे से ग्राम पीलवा, तहसील डीडवाना में जन्मे बालमुकुन्द बिस्सा ने 1934 में जोधपुर में गांधी जी से प्रेरित होकर खादी भण्डार खोला और तब से राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भाग लेने लगा। उसका जवाहर खादी भण्डार शीघ्र ही राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया। 1942 में जोधपुर में उत्तरदायी शासन के लिए जो आन्दोलन चला, उसमें उसे गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। जहाँ भूख हड़ताल एवं यातनाओं

के कारण वह शहीद हो गया परन्तु उससे प्रेरित होकर कई युवा प्रजामण्डल–आन्दोलन में कूद पड़े।

**मेवाड़** में प्रजामण्डल की स्थापना बिजौलिया आन्दोलन के कर्मठ नेता माणिक्यलाल वर्मा द्वारा मार्च, 1938 में की गई। इस हेतु वे साइकिल पर सवार होकर निकल पड़े। वे जब शाहपुरा होकर गुजरे तो वहाँ उन्हें रमेश चन्द्र ओझा और लादूराम व्यास जैसे उत्साही व्यक्ति मिल गये। वर्मा की प्रेरणा से इन नवयुवकों ने 1938 में शाहपुरा राज्य में प्रजामण्डल की स्थापना की। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि शाहपुरा राज्य ने प्रजामण्डल की गतिविधियों में अनावश्यक दखल नहीं दिया।

**डूँगरपुर** में 1935 में भोगीलाल पण्ड्या ने हरिजन सेवा समिति की स्थापना की। उसी वर्ष शोभालाल गुप्त ने राजस्थान सेवक मण्डल की ओर से हरिजनों और भीलों के हितार्थ सागवाड़ा में एक आश्रम स्थापित किया। इसी बीच बिजौलिया आन्दोलन के प्रमुख सूत्रधार माणिक्यलाल वर्मा जन–जातियों में काम करने के उद्देश्य से डूँगरपुर आये। उन्होंने 'बागड़ सेवा मन्दिर' की स्थापना द्वारा भीलों में साक्षरता का प्रचार किया तथा सामाजिक कुरीतियों के निवारणार्थ उल्लेखनीय कार्य किया। इससे भीलों में नवजीवन का संचार हुआ। परन्तु राज्य सरकार ने शीघ्र ही वॉगड़ सेवा मन्दिर की रचनात्मक प्रवृत्तियों को नियन्त्रित कर दिया। 1944 में डूँगरपुर प्रजामण्डल की स्थापना हरिदेव जोशी, भोगीलाल पण्ड्या, गौरीशंकर आचार्य आदि ने मिलकर की। डूँगरपुर के भोगीलाल पण्ड्या पर जेल में किये जाने वाले अमानुषिक व्यवहार का गोकुल भाई भट्ट, माणिक्यलाल वर्मा, हीरालाल शास्त्री, रमेशचन्द्र व्यास आदि ने मिलकर जमकर विरोध किया। फलस्वरूप डूँगरपुर महारावल को पण्ड्या सहित अनेक कार्यकत्ताओं को छोड़ना पड़ा।

## भारत छोड़ो आन्दोलन और राजस्थान

भारत छोड़ो आन्दोलन (प्रस्ताव 8 अगस्त, शुरुआत 9 अगस्त, 1942) के 'करो या मरो' की घोषणा के साथ ही राजस्थान में भी गांधीजी की गिरफ्तारी का विरोध होने लगा। जगह–जगह जुलूस, सभाओं और हड़तालों का आयोजन होने लगा। विद्यार्थी अपनी शिक्षण संस्थानों से बाहर आ गये और आन्दोलन में कूद पड़े। स्थान–स्थान पर रेल की पटरियाँ उखाड़ दी, तार और टेलीफोन के तार काट दिये। स्थानीय जनता ने समानान्तर सरकारें स्थापित कर लीं। उधर जवाब में ब्रिटिश सरकार ने भारी दमनचक्र चलाया। जगह–जगह पुलिस ने गोलियाँ चलाई। कई मारे गये, हजारों गिरफ्तार किये गये। देश की आजादी की इस बड़ी लड़ाई में राजस्थान ने भी कंधे से कंधा मिलाकर योगदान दिया।

जोधपुर राज्य में सत्याग्रह का दौर चल पड़ा। जेल जाने वालों में मथुरादास माथुर, देवनारायण व्यास, गणेशीलाल व्यास, सुमनेश जोशी, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा, छगनराज चौपासनीवाला, स्वामी कृष्णानंद, द्वारका प्रसाद पुरोहित आदि थे। जोधपुर में विद्यार्थियों ने बम बनाकर सरकारी सम्पत्ति को नष्ट किया। किन्तु राज्य सरकार के दमन के कारण आन्दोलन कुछ समय के लिए शिथिल पड़ गया। अनेक लोगों ने जयनारायण व्यास पर आन्दोलन समाप्त करने का दवाब डाला, परन्तु वे अडिग रहे। राजस्थान में 1942 के आन्दोलन में जोधपुर राज्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस आन्दोलन में लगभग 400 व्यक्ति जेल में गए। महिलाओं में श्रीमती गोरजा देवी जोशी, श्रीमती सावित्री देवी भाटी, श्रीमती सिरेकंवल व्यास, श्रीमती राजकौर व्यास आदि ने अपनी गिरफ्तारियाँ दी।

माणिक्यलाल वर्मा रियासती नेताओं की बैठक में भाग लेकर इंदौर आये तो उनसे पूछा गया कि भारत छोड़ो आन्दोलन के संदर्भ में मेवाड़ की क्या भूमिका रहेगी, तो उन्होंने उत्तर दिया, "भाई हम तो मेवाड़ी हैं, हर बार हर–हर महादेव बोलते आये हैं, इस बार भी बोलेंगे।" स्पष्ट था कि भारत छोड़ो आन्दोलन के प्रति उनका सकारात्मक रूख था। बम्बई से लौटकर उन्होंने मेवाड़ के महाराणा को ब्रिटिश सरकार से सम्बन्ध विच्छेद करने का 20 अगस्त, 1942 को अल्टीमेटम दिया। परन्तु महाराणा ने इसे महत्त्व नहीं दिया। दूसरे दिन माणिक्यलाल गिरफ्तार कर लिये गये। उदयपुर

में काम–काज ठप्प हो गया। इसके साथ ही प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ता और सहयोगियों की गिरफ्तारियों का सिलसिला शुरू हुआ। उदयपुर के भूरेलाल बया, बलवन्त सिंह मेहता, मोहनलाल सुखाड़िया, मोतीलाल तेजावत, शिवचरण माथुर, हीरालाल कोठारी, प्यारचंद विश्नोई, रोशनलाल बोर्दिया आदि गिरफ्तार हुए। उदयपुर में महिलाएँ भी पीछे नहीं रहीं। माणिक्यलाल वर्मा की पत्नी नारायणदेवी वर्मा अपने 6 माह के पुत्र को गोद में लिये जेल में गयी। प्यारचंद विश्नोई की धर्मपत्नी भगवती देवी भी जेल गयी। आन्दोलन के दौरान उदयपुर में महाराणा कॉलेज और अन्य शिक्षण संस्थाएँ कई दिनों तक बन्द रहीं। लगभग 600 छात्र गिरफ्तार किये गये। मेवाड़ के संघर्ष का दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र नाथद्वारा था। नाथद्वारा में हड़ताले और जुलूसों की धूम मच गयी। नाथद्वारा के अतिरिक्त भीलवाड़ा, चित्तौड़ भी संघर्ष के केन्द्र थे। भीलवाड़ा के रमेश चन्द्र व्यास, जो मेवाड़ प्रजामण्डल के प्रथम सत्याग्रही थे, को आन्दोलन प्रारम्भ होते ही गिरफ्तार कर लिया। मेवाड़ में आन्दोलन को रोका नहीं जा सका, इसका प्रशासन को खेद रहा।

जयपुर राज्य की 1942 के भारत छोड़ों आन्दोलन में भूमिका विवादास्पद रही। जयपुर प्रजामण्डल का एक वर्ग भारत छोड़ों आन्दोलन से अलग नहीं रहना चाहता था। इनमें बाबा हरिश्चन्द, रामकरण जोशी, दौलतमल भण्डारी आदि थे। ये लोग पं0 हीरालाल शास्त्री से मिले। हीरालाल शास्त्री ने 17 अगस्त, 1942 की शाम को जयपुर में आयोजित सार्वजनिक सभा में आन्दोलन की घोषणा का आश्वासन दिया। यद्यपि पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार सभा हुई, परन्तु हीरालाल शास्त्री ने आन्दोलन की घोषणा करने के स्थान पर सरकार के साथ हुई समझौता वार्ता पर प्रकाश डाला। हीरालाल शास्त्री ने ऐसा सम्भवतः इसलिए किया कि उनके जयपुर के तत्कालीन प्रधानमंत्री मिर्जा इस्माइल से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे तथा जयपुर महाराजा के रवैये एवं आश्वासन से जयपुर प्रजामण्डल सन्तुष्ट था। जयपुर राज्य के भीतर और बाहर हीरालाल शास्त्री की आलोचना की गई। बाबा हरिश्चन्द और उनके सहयोगियों ने एक नया संगठन 'आजाद मोर्चा' की स्थापना कर आन्दोलन चलाया। इस मोर्चे का कार्यालय गुलाबचन्द कासलीवाल के घर स्थित था। जयपुर के छात्रों ने शिक्षण संस्थाओं में हड़ताल करवा दी।

कोटा राज्य प्रजामण्डल के नेता पं. अभिन्नहरि को बम्बई से लौटते ही 13 अगस्त को गिरफ्तार कर लिया गया। प्रजामण्डल के अध्यक्ष मोतीलाल जैन ने महाराजा को 17 अगस्त को अल्टीमेटम दिया कि वे शीघ्र ही अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। फलस्वरूप सरकार ने प्रजामण्डल के कई कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। इनमें शम्भूदयाल सक्सेना, बेणीमाधव शर्मा, मोतीलाल जैन, हीरालाल जैन आदि थे। उक्त कार्यकर्त्ताओं की गिरफ्तारी के बाद नाथूलाल जैन ने आन्दोलन की बागड़ोर सम्भाली। इस आन्दोलन में कोटा के विद्यार्थियों का उत्साह देखते ही बनता था। विद्यार्थियों ने पुलिस को बेरकों में बन्द कर रामपुरा शहर कोतवाली पर अधिकार (14–16 अगस्त,1942) कर उस पर तिरंगा फहरा दिया। जनता ने नगर का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया। लगभग 2 सप्ताह बाद जनता ने महाराव के इस आश्वासन पर कि सरकार दमन सहारा नहीं लेगी, शासन पुनः महाराव को सौंप दिया। गिरफ्तार कार्यकर्त्ता रिहा कर दिये गये।

भरतपुर में भी भारत छोड़ों आन्दोलन की चिंगारी फैल गई। भरतपुर राज्य प्रजा परिषद् के कार्यकर्त्ता मास्टर आदित्येन्द्र, युगलकिशोर चतुर्वेदी, जगपतिसिंह, रेवतीशरण, हुक्मचन्द, गौरीशंकर मित्तल, रमेश शर्मा आदि नेता गिरफ्तार कर लिये गये। इसी समय दो युवकों ने डाकखानों और रेलवे स्टेशनों को तोड़–फोड़ की योजना बनाई, परन्तु वे पकड़े गये। आन्दोलन की प्रगति के दौरान ही राज्य में बाढ़ आ गयी। अतः प्रजा परिषद् ने इस प्राकृतिक विपदा को ध्यान में रखते हुए अपना आन्दोलन स्थगित कर राहत कार्यों में लगने का निर्णय लिया। शीघ्र ही सरकार से आन्दोलनकारियों की समझौता वार्ता प्रारम्भ हुई। वार्ता के आधार पर राजनीतिक कैदियों को रिहा कर दिया गया। सरकार ने निर्वाचित सदस्यों के बहुमत वाली विधानसभा बनाना स्वीकार कर लिया।

शाहपुरा राज्य प्रजामण्डल ने भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू होने के साथ ही राज्य को अल्टीमेटम दिया कि वे अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। फलस्वरूप प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ता रमेश चन्द्र ओझा, लादूराम व्यास, लक्ष्मीनारायण कौटिया गिरफ्तार कर लिये गये। शाहपुरा के गोकुल लाल असावा पहले ही अजमेर में गिरफ्तार कर लिये गये थे।

अजमेर में कांग्रेस के आह्वान के फलस्वरूप भारत छोड़ों आन्दोलन का प्रभाव पड़ा। कई व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। इनमें बालकृष्ण कौल, हरिभाऊ उपाध्याय, रामनारायण चौधरी, मुकुट बिहारी भार्गव, अम्बालाल माथुर, मौलाना अब्दुल गफूर, शोभालाल गुप्त आदि थे। प्रकाशचन्द ने इस आन्दोजन के संदर्भ में अनेक गीतों को रचकर प्रजा को नैतिक बल दिया। जेलों के कुप्रबन्ध के विरोध में बालकृष्ण कौल ने भूख हड़ताल कर दी।

बीकानेर में भारत छोड़ो आन्दोलन का विशेष प्रभाव देखने को नहीं मिलता है। बीकानेर राज्य प्रजा परिषद् के नेता रघुवरदयाल गोयल को पहले से ही राज्य से निर्वासित कर रखा था। बाद में गोयल के साथी गंगादास कौशिक ओर दाऊदयाल आचार्य को गिरफ्तार कर लिया गया। इन्हीं दिनों नेमीचन्द आँचलिया ने अजमेर से प्रकाशित एक साप्ताहिक में लेख लिखा, जिसमें बीकानेर राज्य में चल रहे दमन कार्यों की निंदा की गई। राज्य सरकार ने आँचलिया को 7 वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया। राज्य में तिरंगा झण्डा फहराना अपराध माना जाता था। अतः राज्य में कार्यकर्त्ताओं ने झण्डा सत्याग्रह शुरू कर भारत छोड़ों आन्दोलन में अपना योगदान दिया।

अलवर, डूँगरपुर, प्रतापगढ़, सिरोही, झालावाड़ आदि राज्यों में भी भारत छोड़ो आन्दोलन की आग फैली। सार्वजनिक सभाएँ कर देश में अंग्रेजी शासन का विरोध किया गया। कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुई। हड़तालें हुई। जुलुस निकाले गये।

## सिंहावलोकन

रियासतों में जन आन्दोलनों के दौरान लोगों को अनेक प्रकार के जुल्मों एवं यातनाओं का शिकार होना पड़ा। किसान आन्दोलनों, जनजातीय आन्दोलनों आदि ने राष्ट्रीय जाग्रति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। ये स्वस्फूर्त आन्दोलन थे। इनसे सामन्ती व्यवस्था की कमजोरियाँ उजागर हुई। यद्यपि इन आन्दोलनों का लक्ष्य राजनीतिक नहीं था, परन्तु निरंकुश सत्ता के विरुद्ध आवाज के स्वर बहुत तेज हो गये, जिससे तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था को आलोचना का शिकार होना पड़ा। यदि आजादी के पश्चात् राजतन्त्र तथा सामन्त प्रथा का अवसान हुआ, तो इसमें इन आन्दोलनों की भूमिका को ओझल नहीं किया जा सकता है। अनेक देशभक्तों को प्राणों की आहुति देनी पड़ी। शहीद बालमुकुन्द बिस्सा, सागरमल गोपा आदि का बलिदान प्रेरणा के स्रोत बने। प्रजामण्डल आन्दोलनों से राष्ट्रीय आन्दोलन को सम्बल मिला। प्रजामण्डलों ने अपने रचनात्मक कार्यों के अन्तर्गत सामाजिक सुधार, शिक्षा का प्रसार, बेगार प्रथा के उन्मूलन एवं अन्य आर्थिक समस्याओं का समाधान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाये। यह कहना उचित नहीं है कि राजस्थान में जन–आन्दोलन केवल संवैधानिक अधिकारों तथा उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए था, स्वतन्त्रता के लिए नहीं। डॉ. एम.एस. जैन ने उचित ही लिखा है, "स्वतन्त्रता संघर्ष केवल बाह्य नियंत्रण के विरुद्ध ही नहीं होता, बल्कि निरंकुश सत्ता के विरुद्ध संघर्ष भी इसी श्रेणी में आते हैं।" चूंकि रियासती जनता दोहरी गुलामी झेल रही थी, अतः उसके लिए संवैधानिक अधिकारों की प्राप्ति तथा उत्तरदायी शासन की स्थापना से बढ़कर कोई बात नहीं हो सकती थी।

रियासतों में शासकों का रवैया इतना दमनकारी था कि खादी प्रचार, स्वदेशी शिक्षण संस्थाओं जैसे रचनात्मक कार्यों को भी अनेक रियासतों में प्रतिबन्धित कर दिया गया। सार्वजनिक सभाओं पर प्रतिबन्ध होने के कारण जन चेतना के व्यापक प्रसार में अड़चने आयी। ऐसी कठिन परिस्थितियों में लोक संस्थाओं की भागीदारी कठिन थी। जब तक कांग्रेस ने अपने हरिपुरा अधिवेशन (1938) में देशी रियासतों में चल रहे आन्दोलनों को समर्थन नहीं दिया, तब तक राजस्थान की

रियासतों में जन आन्दोलन को व्यापक समर्थन नहीं मिल सका। हरिपुरा अधिवेशन के पश्चात् रियासती आन्दोलन राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ गया।

धीरे–धीरे राजस्थान आज़ादी के संघर्ष के अंतिम सोपान की ओर बढ़ रहा था। आज़ादी से पूर्व राजस्थान विभिन्न छोटी–छोटी रियासतों में बँटा हुआ था। 19 देशी रियासतों, 2 चीफ़शिपों एवं एक ब्रिटिश शासित प्रदेश में विभक्त था। इसमें सबसे बड़ी रियासत जोधपुर थीं और सबसे छोटी लावा चीफ़शिप थी। राजस्थान के एकीकरण की प्रक्रिया समस्त भारतीय राज्यों के एकीकरण का हिस्सा थी। एकीकरण में सरदार वल्लभ भाई पटेल, वी.पी. मेनन सहित स्थानीय शासक, रियासतों के जननेता, जिनमें जयनारायण व्यास, माणिक्यलाल वर्मा, पं. हीरालाल शास्त्री, प्रेम नारायण माथुर, गोकुल भाई भट्ट आदि शामिल थे, की अहम् भूमिका रही। जनता रियासतों के प्रभाव से मुक्त होना चाहती थी क्योंकि वह उनके आतंक एवं अलोकतांत्रिक शासन से नाखुश थी। साथ ही, वह स्वयं को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ना चाहती थी। राजस्थान में संचालित राष्ट्रवादी गतिविधियों एवं विभिन्न कारकों ने मिलकर राजस्थान में एकता का सूत्रपात किया। फलतः 18 मार्च, 1948 से 1 नवम्बर, 1956 तक सात चरणों में राजस्थान का एकीकरण सम्पन्न हुआ। 30 मार्च, 1949 को वृहत् राजस्थान का निर्माण हुआ, जिसकी राजधानी जयपुर बनायी गयी ओर पं. हीरालाल शास्त्री को नवनिर्मित राज्य का प्रथम मुख्यमंत्री नियुक्त किया गया।

# अभ्यासार्थ प्रश्न

## बहुविकल्पात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में 1857 के विद्रोह की शुरुआत कब हुई ?

(अ) 10 मई (ब) 28 मई

(स) 10 जून (द) 18 मई

2. राजस्थान में 1857 के महान् विद्रोह की शुरुआत कहाँ से हुई ?

(अ) अजमेर (ब) कोटा

(स) नसीराबाद (द) नीमच

3. ठाकुर कुशालसिंह ने कहाँ के क्रांतिकारियों के विद्रोह का नेतृत्व किया ?

(अ) जोधपुर (ब) नीमच

(स) सलूम्बर (द) आउवा

4. लाला जयदयाल और मेहराब खाँ ने कहाँ के विद्रोह का नेतृत्व किया ?

(अ) कोटा (ब) भरतपुर

(स) एरिनपुरा (द) धौलपुर

5. विजयसिंह पथिक ने किस कृषक आन्दोलन का नेतृत्व किया ?

(अ) बिजौलिया (ब) बरड़

(स) शेखावाटी (द) बेगूं

6. 'सम्प सभा' की स्थापना किसने की ?

(अ) मोतीलाल तेजावत

(ब) राव गोपालसिंह

(स) गोविन्द गुरु

(द) कृष्णसिंह बारहठ

7. भगत आन्दोलन किस क्षेत्र में हुआ ?

(अ) डूँगरपुर–बाँसवाड़ा

(ब) सिरोही–पाली

(स) भीलवाड़ा–शाहपुरा

(द) अजमेर–नागौर

8. मेवाड़ प्रजामण्डल से सम्बद्ध नेता थे ?

(अ) पं. हीरालाल शास्त्री

(ब) पं. नयनूराम शर्मा

(स) पं. अभिन्न हरि

(द) माणिक्यलाल वर्मा

9. भोगीलाल पण्ड्या किस रियासत के प्रजामण्डल से सम्बद्ध रहे ?

(अ) अलवर (ब) डूँगरपुर

(स) जयपुर (द) अजमेर

10. शहीद सागरमल गोपा का सम्बन्ध किस रियासत से रहा है ?

(अ) बाँसवाड़ा (ब) जैसलमेर

(स) डूंगरपुर (द) सिरोही

## अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. 1857 से पूर्व किन–किन स्थानों पर सैनिक छावनियाँ थीं ?
2. क्रांतिकारियों का नेतृत्व करने वाले दो ठिकानेदारों का नाम बताइये।
3. राजस्थान में सर्वप्रथम क्रांति करने वाली पलटन का नाम बताइये।
4. भीलों को संगठित करने वाले 4 नेताओं के नाम बताइये।
5. राजस्थान के कोई चार किसान आन्दोलनों के नाम लिखिए।
6. राजस्थान में आर्य समाज से जुड़े कोई दो नेताओं के नाम बताइये।
7. बिजौलिया किसान आन्दोलन की खबर को सर्वप्रथम महत्त्व देने वाले समाचार पत्र का क्या नाम था ?
8. भरतपुर रियासत का पूर्णसिंह कौन था ?
9. कोटा प्रजामण्डल के दो नेताओं के नाम बताइये।
10. स्वामी गोपालदास का चुरू–बीकानेर क्षेत्र में स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान क्या योगदान रहा ?

## लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. 15 वीं बंगाल इन्फेंट्री द्वारा नसीराबाद में क्रांति के क्या कारण थे ?
2. 1857 के संघर्ष में कोटा का क्या योगदान रहा ?
3. आउवा के ठाकुर कुशालसिंह का 1857 के संघर्ष में रहे योगदान को स्पष्ट कीजिये।
4. राजस्थान के सन्दर्भ में 1857 की क्रांति का स्वरूप समझाइये।
5. राजस्थान में क्रांतिकारी गतिविधियों पर प्रकाश डालिये।
6. राजस्थान के जन चेतना के विकास में कवियों के योगदान की चर्चा कीजिये।
7. गोविन्द गुरू एवं मोतीलाल तेजावत का भील समाज के प्रति जो योगदान रहा, उसका विवेचन कीजिये।
8. बिजौलिया किसान आन्दोलन की मुख्य घटनाओं पर प्रकाश डालिये।
9. जन जागरण में आर्य समाज की भूमिका स्पष्ट कीजिये।
10. भरतपुर प्रजामण्डल की गतिविधियों पर टिप्पणी लिखिये।

## निबन्धात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में 1857 की क्रांति की पृष्ठभूमि की विवेचना कीजिये।
2. नसीराबाद, कोटा एवं आउवा में 1857 के दौरान हुई क्रांतिकारी गतिविधियों का वर्णन कीजिये।
3. राजस्थान में जनजाति आन्दोलन का विवरण एवं महत्त्व प्रस्तुत कीजिये।
4. मेवाड़, जयपुर एवं भरतपुर के सन्दर्भ में प्रजामण्डल आन्दोलन का मूल्यांकन कीजिये।

^ ^ ^